दीपिका

कादम्बरी सौरभम्

मूल्य १.५० पै०

दीपिका:

कादम्बरी सौरभम्

[इण्टरमीडिएट कक्षाओं के लिए]

[—: सम्भावित प्रश्नों सहित सरल व सरल टीका :—]

टीकाकार :

श्री रमाकान्त झा

एम० ए० (हिन्दी संस्कृत)

प्रकाशक :

मोहन प्रकाशन, सहारनपुर

[मूल्य ४—५० रु.
नेट मूल्य १·५० रु०

...नीन संस्करण]

सम्भावित व्याख्यायें

(क) पृष्ठ १३ अनुच्छेद ॥२॥

व्याख्या—प्राचीन काल में दूसरे इन्द्र के समान चक्रवर्ती चिन्हों से युक्त सूर्य के समान नित्य प्रति उन्नति को प्राप्त करता हुआ बड़े २ आश्चर्यों का करने वाला संगीत आदि कलाओं का उत्पत्ति स्थान, भावुकों का आधर भूत, साहसियों में श्रेष्ठ, पण्डितों में अग्रसर शुद्रक नाम का राजा था जो मन में धर्म के, क्रोध में यम के, प्रताप में अग्नि के, वाणी में सरस्वती के, मुख में चन्द्रमा के, बुद्धि में वृहस्पति के, रूप में कामदेव के, तेज में सूर्य के समान रहता हुआ सर्व देव शक्ति से युक्त भगवान का अनुकरण करता था।

(ख) पृष्ठ १७ अनुच्छेद ॥११॥

अस्ति ....निवसन्तिस्म।

सन्दर्भ जब महाराजा ने कहा कि मुझे अपना परिचय दीजिए, कहाँ आप का जन्म हुआ तथा कौन आपकी माता है। तब तोते ने कहा कि महाराज यह बहुत बड़ी कथा है सुनिये

व्याख्या मध्यप्रदेश की भूषण स्वरूप पृथ्वी की मेखला के समान वृक्षों से सुशोभित पत्तों के, समूह से ढकी हुई लताओं से सुशोभित तम्बाकू के समान नीले रङ्ग की, बन्दरों से युक्त सैंकड़ों बेल लताओं के कारण कठिनता से प्रवेश करने योग्य, विन्ध्यावटी नाम का वन है। उसमें गोदावरी नदी से घिरा हुआ महामुनि अगस्त्य का आश्रम था। जहाँ पर आज भी रामचन्द्र जी के धनुष आवाज का स्मरण करते हुए सीता जी के द्वारा पाले हुए हरिण घास नहीं खाते हैं, जहाँ पर सोने का मृग राम को हर ले गया था, अगस्त्य मुनि के ऐसे आश्रम के पास ही वन के हाथियों ने जल पिया बहुत गहरा, बहुत बड़ा, बड़ी आकृति वाला, पानी का खजाना, पम्पासर नाम का कमलों का तालाब था उस तालाब के ही पश्चिम किनारे पर एक बहुत पुराना सम्भल का पेड़ था। उस पेड़ पर खोखरों में पत्तों के नीचे घोंसले बनाये हुए तोतों तथा दूसरे पक्षियों के समूह रहते थे।

(ग) पृष्ठ १८ अनुच्छेद ॥१४॥

आसीच्च मे मनसि.................. समुपाविशत् ।

व्याख्या - मेरे मन में आया अहो ! इनका जीवन अज्ञान से भरा हुआ है, इनका चरित्र सज्जनों से निन्दित है इनका भोजन सज्जनों से निन्दित शराब तथा मांस है शिकार खेलने से ये शक्ति साधन करते हैं। सियारों की आवाज ही इनका शास्त्र है, उल्लू सत्य असत्य का उपदेश करने वाले हैं, क्रूर कर्म करने वाले धनुप इनके मित्र हैं, वाण इनकी सहायता देने वाले हैं, व्याघ्रों के साथ रहते हैं पशुओं के रक्त से देवताओं की पूजा करते हैं, चोरी से जीवन चलाते है तथा वन के,हाथियों का मद इनका उबटन है । जिस वन में रहते हैं उनको जड़ से उखाड़ देते है मेरे इस प्रकार सोचते हुए ही थकावट को दूर करने की इच्छा वाला वह भीलों का सेनापति उसी सम्भल के पेड़ की छाया के नीचे साथियों द्वारा लाये हुए पत्तों के आसन पर बैठ गया ।

(घ) पृष्ठ २० अनुच्छेद ॥१७॥

अतिकष्टाम्:··· ··········नानुगच्छन्ति ।

सन्दर्भ—पिता की गोद से निकल कर वैशम्पायन तमाल के वृक्षों में घुस गया वहां पर पानी की खोज में चलते हुए बार बार पृथ्वी पर गिरते हुए उसके मन में आया कि—

व्याख्या—इस संसार में बड़ी कष्ट की हालत में भी जीवन से उदासीन नहीं होते । यहां प्राणियों को जीवन से बढ़कर और वस्तु प्रिय नहीं है । प्रातः स्मरणीय पिता के इस प्रकार मर जाने पर भी विषयों को ग्रहण करने में समर्थ इन्द्रियों वाला मैं अब भी जीता हूं । निर्दयी कठोर तथा अहसान न मानने वाले मुझको धिक्कार है । मेरा हृदय वास्तव में दुष्ट है । माता के मरने के शोक को रोक पिताजी ने जिन जिन उपायों से मुझे पाला उन सबको मैंने एक क्षण में भुला दिया । ये प्राण बड़े तुच्छ हैं जो उपकारी पिता के मरने पर उसके पीछे नहीं है ।

(ङ) पृष्ठ २२ अनुच्छेद ॥१९॥

अनतिदूरमिव··· ···········अपश्यम् ।

सन्दर्भ—वैशम्पायन तोता आश्रम का वर्णन करता है—

व्याख्या - कुछ दूर जाकर ही जिसमें विद्यार्थी अध्ययन करने में वाचाल हो रहे हैं, जहाँ पर अतिथियों की सेवा हो रही है, जहाँ विष्णु, शिव, ब्रह्मा का पूजन हो रहा है, जहां पर यज्ञ विद्या का व्याख्यान हो रहा है, जहां अनेक प्रकार की पुस्तक पढ़ी जा रही है, जहां सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ पर विचार हो रहा है जहां पर्ण कुटियों की रचना हो रही है, जहाँ चबूतरे लीपे जा रहे हैं, जहाँ ध्यान लगाया जा रहा है, जहाँ पर मन्त्र सिद्ध किये जा रहे हैं, जहां योग का अध्ययन किया जा रहा है, जहां वल्कल वस्त्र धोये जा रहे हैं, जहां लकड़ियाँ इकट्ठी की जा रही हैं, जहां रुद्राक्ष की माला गूंथी जा रही हैं, जहां धान्य विशेष इकट्ठा किया जा रहा है, जहां कमण्डल भरे जा रहे हैं, ऐसे अति सुन्दर दूसरे ब्रह्म लोक के समान आश्रम को देखा।

(च) पृष्ठ ३३ अनुच्छेद ॥३७॥

आसीच्चास्य मनसि ....उदतिष्ठत् ।

सन्दर्भ जब राजकुमार सब विद्याओं में निपुण हो गया तो तारापीड ने बलाहक को इन्द्रयुद्ध नाम का घोड़ा देकर राजकुमार को लाने के लिए भेजा। राजकुमार घोड़े को देखकर आश्चर्य में पड़ गया।

व्याख्या इसके मन में आया कि अत्यन्त तेजस्वी तथा शक्तिशाली होने के कारण इसकी यह आकृति देवताओं के समान मालूम पड़ती है। जिससे यह मेरे चढ़ने में शङ्का उत्पन्न करता है। निश्चय ही यह मुनि के शाप के कारण देवताओं के साथ रहने वाले शरीर को छोड़कर इस शरीर में रह रहा हो। निःसन्देह यह किसी शाप को भोग रहा है। इस अलौकिकता को देखकर मेरा हृदय यह कह रहा है इस प्रकार विचार करते हुए आसन से उठ गया।

(छ) पृष्ठ ३८ अनुच्छेद ॥४३॥

अपि च.......... ......उद्भावयन्ति ।

सन्दर्भ—शुकनास चन्द्रापीड को उपदेश देते हुए कह रहा है कि प्रभु बढ़ाने के कारण विचलित हो गये हैं। अतः स्वयं ही बलात्... [illegible] धर्म बुद्धि का तिरस्कार समझकर [illegible] के उपदेश में दोष... [illegible]

बात कहने वाले से क्रोध करते हैं। जो सब कर्त्तव्यों को छोड़कर दिन रात हाथ जोड़े हुए, इष्ट देवता की भांति महात्मा गाता रहता है सब प्रकार से ये उनका ही अभिनन्दन करते हैं, उनके साथ ही वार्तालाप करते हैं, उसको ही पास में रखते हैं। उसको ही बहुमूल्य वस्तुयें देते हैं, उसके साथ ही मित्रता करते हैं, उनकी ही बात सुनते हैं, उसके ऊपर ही वर्षा करते हैं, उसका ही सम्मान करते हैं तथा उसको ही बड़ा मानते हैं।

(ज) पृष्ठ ४७ अनुच्छेद ॥५५॥

व्याख्या—वही महाश्वेता नाम वाली मैं अपने पिता के घर से बचपन के कारण अति सुन्दर तथा मधुर बोलने वाली वीणा के समान गन्धर्वों की एक गोद से दूसरे की गोद में घूमती हुई शोक तथा थकान से रहित मनोहर बचपन को बिताने लगी। धीरे धीरे मेरे शरीर में चैत्र के महीने में बसन्त की तरह नवीन २ पत्तों से चैत्र की तरह फूलों मे नवीन पत्तों की तरह भौंरों से फूलों की तरह नव यौवन (जवानी) ने प्रवेश किया। इसके पश्चात् सम्पूर्ण संसार के हृदय को आनन्द देने वाले वसन्त के दिनों में एक दिन मैं अपनी माता के साथ वसन्त के द्वारा बढ़ाई हुई शोभा से युक्त अच्छोद नाम के तालाब पर स्नान करने आई और यहां आकर देखा कि फूलों की शोभा से यह लता मण्डप बहुत मनोहारी है, यह मधु की धार टपकाता हुआ सुन्दर मञ्जरी युक्त आम का वृक्ष है, यह चन्दन के वृक्षो की वीथि बड़ी ठण्डी है, यहां तट पर खड़े हुए वृक्षों की छाया बहुत सुन्दर है। इस प्रकार अनेक सुन्दर स्थानों को देखने के लोभ में पड़े हुए हृदय वाली मैं अपनी सखियों के साथ घूमने लगी।

(झ) पृष्ठ ५३ अनुच्छेद ॥६३॥

प्रसङ्ग—कपिञ्जल ने अपने मित्र की स्थिति का वर्णन किया इसके पश्चात् आंसू पोंछते हुए पुण्डरीक ने कपिञ्जल को जो कहा था उसका वर्णन बाण भट्ट जी इस अनुच्छेद में करते हैं;

व्याख्या मित्र अधिक कहने से क्या लाभ? तुम पूर्णरूप से स्वस्थ हो इसीलिए सरलता से दूसरों को उपदेश दे रहे हो। जिसके पास इन्द्रियां हों, मन हो, जो देखता सुनता हो अथवा सुने हुए विचार रखता हो तथा जो यह शुभ

है यह अशुभ'. इस प्रकार का विवेक करने में समर्थ हो उसी को उपदेश देना चाहिए मेरा तो अब उपदेश का समय बीत चुका है इस समय जो करना चाहिए उचित है वही तुम करो इतना कहकर वह चुप हो गया तब मैंने सोचा, यह बहुत दूर पहुंच गया है । अब इसको लौटाया नही जा सकता उपदेश व्यर्थ है इसलिए इसकी प्राण रक्षा का यत्न करू । यह सोचता हुआ ही मैं यहां आया हूँ । अब इस अवस्था में अवसर के अनुसार जो करना उचित हो वह आप कर सकती हैं यह कहकर कपिजल चुप हो गया ।

(ञ) पृष्ठ ५७ अनुच्छेद ॥७५॥

प्रसङ्ग —तब तरलिका ने महाश्वेता से कपिंजल के आगमन पर्यन्त जीवित रहने को । महाश्वेता ने भी कपिंजल के आने तक जीवन त्याग न करने का निश्चय किया और उसी तालाब के तट पर रात बिताई ।

व्याख्या · महाश्वेता कहने लगी कि प्रातःकाल उठकर उसी तालाब में स्नान किया और स्नान करके निश्चय पूर्वक उसके (पुण्डरीक के) प्रेम से कमण्डल को लेकर उन्हीं वस्त्र तथा अक्षमाला को ग्रहण करके संसार की निसारता को विचार कर अपनी मन्द पुण्यता को जानकर भाग्य की निष्ठुरता को देखकर तथा सभी सांसारिक पदार्थों की अनित्यभता को सोचकर अपने पिता और माता का ध्यान करके सभी विषय वासनाओं के सुख से मन को हटा इन्द्रियों को वश में करके तथा ब्रह्मचर्य व्रत धारण करके शरणार्थिनी मैं तीनों लोकों के स्वामी अनाथों की शरण इन भगवान शङ्कर की शरण में आ गई ।

(ट) पृष्ठ ६२ अनुच्छेद ८५॥

प्रसङ्ग चन्द्रापीड ने मदलेखा की सज्जनता तथा कादम्बरी के गुणों की प्रशंसा करते हुए कहा कि यह उनका दास हो गया है । कुछ देर कादम्बरी सम्बन्धी बातचीत करके उसने मदलेखा को विदा किया ।

व्याख्या इसके पश्चात् भगवान शङ्कर के लाल हो जाने पर कमलों के वनों के हरित हो जाने पर, कुमुदों के समूह सफेद हो जाने पर, दिशाओं के रक्त वर्ण की हो जाने पर तथा रात के काली हो जाने पर चन्द्रापीड ग्रह कुमुदों के [illegible] गया । तब कादम्बरी चन्द्रापीड से मिलने आई । कुछ

देर बैठकर प्रस्ताव करने पर राजा तारापीड कैसे हैं देवी विलासवती कैसी है आर्य शुकनास कैसे हैं, उज्जयिनी नगरी कैसी है, वह यहां से कितनी दूर है, भारतवर्ष कैसा देश है आदि सम्पूर्ण बातें पूछी।

(ठ) पृष्ठ ६७ अनुच्छेद ९२।

प्रसङ्ग – स्कन्धाकार में आकर अपने पिता के पत्र को पढ़कर चन्द्रापीड एकदम उज्जयिनी को रवाना हो गया।

व्याख्या—क्रम से अति पुराने और विशाल वृक्षों वाले, मालिनी की बेल के मण्डपों से घिरे हुए, वृक्षों के समूह वाले तथा पत्तों के मिल जाने से गन्ध युक्त जल वाले, निर्जन वन में जाकर सूर्यमण्डल के पूर्व से पश्चिम में परिणत हुए दिन में (सायंकाल में) चन्द्रापीड ने एक बहुत बड़े लाल रङ्ग के झण्डे को लाल चन्दन के पेड़ के ऊपर बन्धा हुआ देखा। उसी झण्डे की ओर कुछ रास्ता चल कर उसने लोहे के दरवाजे से युक्त स्थान वाली, लोहे के बनाये हुए भैंसे से शोभित पत्थर की वेदी (चौंतरे) वाले संस्कार न होने के कारण कुछ २ करने वाले लंगड़ा होने के कारण धीरे २ चलने वाले बहरा होने के कारण इशारों से ही व्यवहार करने वाले बड़ा लम्बा पेट होने के कारण बहुत अधिक खाने वाले एक बूढ़े द्रविड धार्मिक से अधिष्ठित चन्डिका देवी को देखा। उसी स्थान पर उसने डेरा डाल दिया और बिना नींद आये ही उस रात को बिताई।

वाणभट्ट का संक्षिप्त जीवन परिचय

वाणभट्ट गोण नदी के तट पर प्रीति कूट नामक नगर में निवास करते थे। आपके पिता का नाम अर्थपति और माता का नाम चित्र भानु था। बचपन में ही पिता की मृत्यु हो जाने पर आपने अनेक साहित्यिक संगियों के साथ सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया आपने महाराज हर्षवर्धन की विद्वत्सभा के प्रधान पंडित पद को अलंकृत किया। अतः आजीवन आप पर लक्ष्मी और सरस्वती दोनों की अतीव कृपा रही। हर्ष का समय ईसवी सप्तम् शतक है और यही समय ही वाणभट्ट का है।

वाणभट्ट के ग्रन्थ

वाणभट्ट ने अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया। उनके सभी ग्रन्थ उच्च कोटि

के हैं और उनका विद्वत्समाज में सदा से आदर होता आया है। 'चण्डीशतक', 'पार्वती परिणय' तथा 'मुकुट ताडितका' आपके श्रेष्ठ पद्य काव्य हैं 'हर्ष चरित' तथा 'कादम्बरी' आपकी गद्यात्मक रचनायें हैं। इनमें से 'हर्षचरित' संस्कृत साहित्य में सबसे पुरानी आख्यायिका है। 'कादम्बरी' तो सम्पूर्ण गद्य साहित्य का सर्वस्व है।

कादम्बरी

कादम्बरी बाणभट्ट की सर्वश्रेष्ठ रचना है। यह पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दो भागों में विभक्त है। इसमें से बाणभट्ट द्वारा लिखित केवल पूर्वार्द्ध है। उत्तरार्द्ध की रचना बाण की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र पुलिन्द भट्ट ने की। प्रस्तुत पुस्तक में केवल पूर्वार्द्ध की कथा है। कादम्बरी संस्कृत गद्य साहित्य का रत्न है।

कादम्बरी की वर्णन शैली तो अपूर्व ही है। विन्ध्याचल के निकट अटवी में साहसी शबर सैन्य का रोमांचकारी आध्यात्मिकता के साक्षात्प्रतीक जाबालि मुनि के आश्रय का भव्य दृश्य तथा गन्धर्वों की गोद में विहार करने वाली कमलभाषिणी महाश्वेता की विरह विधुरा मधुर मूर्ति पाठकों के हृदय को रस विभोर कर देती है। सम्पूर्ण पुस्तक में अलङ्कारों की मधुर योजना देखते ही बनती है। गद्य होने पर भी कादम्बरी में काव्यों जैसा चमत्कार है। वास्तव में कादम्बरी रसिकों के हृदय को मस्त कर देने वाली मदिरा है। इसमें चमत्कार उत्पन्न करना बाण जैसे विद्वत्प्रवर सहृदय का ही काम था।

'कादम्बरी' के प्रकृति चित्रण

कादम्बरी का प्रकृति वर्णन अत्यन्त सुन्दर तथा सजीव है। कुछ कई प्रकृति के रम्य और कोमल रूपों के चित्रण करने में निपुण होते हैं तो दूसरे उसके भयानक रूप का चित्रण करने में ही अपने को कृत कार्य समझते हैं परन्तु बाण की यह अपनी विशेषता है कि उन्होंने प्रकृति के दोनों रूपों के वर्णनों में सफलता प्राप्त की है। अनेक अलङ्कारों की सहायता से बाण ने प्रकृति के रम्य चित्र खींचे हैं। इसमें एक ओर विन्ध्याटवी के भयावह रूप का मनोहर वर्णन है तो दूसरी ओर महर्षि जाबालि के आश्रम का सात्विक तथा मनोरम

वर्णन पढ़कर हृदय हर्ष से नाचने लगता है। तपोवन के वर्णन में जितनी भी प्रभावोत्पादक बातों की आवश्यकता होती है। उन सभी को बाण ने जाबालि के आश्रम में एकत्र कर दिया है एक दो नहीं प्रभात, सन्ध्या, अन्धकार, चन्द्रोदय, आनन्द आदि अनेक प्राकृतिक दृश्यों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन वाण ने किया है

वाण की भाषा और शैली

महाकवि वाण प्रभावशाली गद्य लिखने में प्रवीण थे। आपने गद्य लेखकों के लिए १ आदर्श शैली प्रस्तुत की है चित्रण की सजीवता तथा प्रभावशालीनता उत्पन्न करने के लिए वाण ने समास बहुधा ओजो गुण प्रधान शैली का आश्रय लिया है। परन्तु सर्वत्र ही ऐसा नहीं है अनेक स्थानों पर छोटे २ वाक्यों के प्रयोग ने उनकी शैली को सशक्त तथा प्रभावोत्पादक बना दिया है। वास्तव में वाण किसी एक शैली के उपासक नहीं हैं। उनकी शैली अवसर तथा प्रसङ्ग अनुसार परिवर्तित होती रहती है। जहाँ एक ओर उन्होंने वन तथा सन्ध्या आदि के वर्णनों में लम्बे २ समासों की छटा दिखाई है तो दूसरी ओर विरह के अवसर पर प्रसाद गुण युक्त छोटे वाक्यों की शोभा प्रस्तुत की है।

सच तो यह है कि वाण के गद्य में सूक्ष्म निरीक्षण चमत्कार पूर्ण वर्णन, अनन्त शब्दों का ढेर तथा मौलिकता ये सब गुण एक साथ हैं। यही कारण है अनुकरण का पूर्ण प्रयत्न करने पर भी अन्य कवियों के गद्य में वह चमत्कार एवं मिठास उत्पन्न नहीं हो पाई है।

कादम्बरी सौरभम्

कथासार

विदिशा नाम की नगरी में शूद्रक नाम के महाप्रतापी राजा थे। एक बार उनकी प्रतिहारी एक चाण्डाल कन्या के साथ सभा में उपस्थित होती है और एक परम निपुण तथा सेवा सम्पन्न तोता महाराज की सेवा में अर्पित करती है

कथा वाणी में सुनाता है कि विन्ध्याचल के दुर्ग वन में एक महान शाल्मली का

वृक्ष था। एक बार उधर से शबरों की सेना निकली। उसका साथी एक बूढ़ा शबर था जो भूख से पीड़ित था। उसने उस पेड़ पर चढ़कर मेरे पिता को मारकर नीचे फेंक दिया। मैं भी अपने पिता के पक्ष पुट में छिपा था। नीचे सूखी पर्ण राशि पर गिरा अतः मरा नहीं पिपासा की शांति के लिए जैसे तैसे जलाशय के पास पहुंचा। वहां पर महर्षि जाबालि के पुत्र हारित स्नानार्थ आये थे। वे मुझे अपने आश्रम में ले आये। महर्षि मुझे देखकर तत्क्षण ही पहचान गये। मुनियों के कौतूहल को शांत करने के लिए उन्होंने मेरे पूर्व जन्म की कथा कही।

(क) कथामुख विवरणम्

१

पृष्ठ १२—रजोजुषे .... नमः।

शब्दार्थ—रजोजुषे—रजोगुण का सेवन करने वाला। सत्त्ववृत्तये—सात्विक वृत्ति वाला। स्थितौ—स्थिति में। प्रजानाम—प्राणियों की। तमःस्पृशे—तमोगुण का स्पर्श करने वाला। अजाय—जन्मा के लिए, विष्णु के लिए। सर्गस्थिति नाश हेतवे—उत्पत्ति सत्ता तथा विनाश के कारण को। त्रयीमयाय—तीनों रूपों वाले। त्रिगुणात्मने—सत्व: रज: तथा तमः इन तीनों गुणों वाली आत्मा वाले को।

अर्थ—संसार की उत्पत्ति के समय रजोगुण का सेवन करने वाले, प्राणियों की सत्ता के समग्र गुणवती वृत्ति वाले तथा विनाश काल में तमोगुण का स्पर्श करने वाले, इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश इन तीनों रूपों को धारण करने वाले, सत्व, रज और तम इन तीनों गुणों वाली आत्मा वाले, संसार की उत्पत्ति स्थिति और विनाश के कारण स्वरूप अजन्मा भगवान विष्णु को नमस्कार।

पृष्ठ १३ (१) पाकशासन इव—इन्द्र की तरह। अपर—दूसरा। चक्रवर्तिलक्षणोपेतः—चक्रवर्ती लक्षणों से युक्त। प्रतिदिवसोपजायमानोदय—नित्यप्रति उन्नति को प्राप्त होता हुआ। कलानां—संगीतादि कलाओं का। रसिकानां—भावुकों का। धौरेयः—श्रेष्ठ। अग्रणी—अग्रसर। विमले कृपाण-

धाराजले—तलवार की धारा के निर्मल जल पर। चिरमुवास बहुत दिनों तक निवास किया। यमेन—यमराज से। प्रतापे—प्रताप में। सरस्वत्या—सरस्वती से। मुखे—मुंह में। शशिना—चन्द्रमा से। प्रज्ञायाँ—बुद्धि। सुर गुरुणां—बृषस्पति से। मनसिजेन – कामदेव से। सविता—सूर्य से। वसता—रहता हुआ। सर्वदेवमयस्य—सम्पूर्ण देवत्व शक्ति वाले। अनुकरोति अनुकरण करता है।

सन्दर्भ कादम्बरी की कथा प्रारम्भ करते हुए लेखक राजा शूद्रक का वर्णन करते हैं।

भावार्थ प्राचीन काल में दूसरे इन्द्र के समान चक्रवर्ती चिन्हों से युक्त सूर्य के समान नित्य प्रति उन्नति को प्राप्त करता हुआ, बड़े २ आश्चर्यों को करने वाला, संगीत आदि कलाओं का उत्पत्ति स्थान, भावुकों का आधारभूत, साहसियों में श्रेष्ठ, पण्डितों का अग्रसर शूद्रक नाम का राजा था। जो मन में धर्म के, क्रोध में यम के, प्रताप में अग्नि के. वाणी में सरस्वती के, मुख में चन्द्रमा के, बुद्धि में बृहस्पति के, रूप में कामदेव के, तेज में सूर्य के समान रहता हुआ सर्व देशभक्ति से युक्त भगवान विष्णु का अनुकरण करता था।

समास—चक्रवर्तिनः लक्षणानि चक्रवर्तिलक्षणानि (षष्ठी तत्पुरुष) तैः उपेत चक्रवर्तिलक्षणोपेतः (तृतीया तत्पुरुष)।

पृष्ठ १३–१४ (२) यस्मिश्च······ ·······सुखमतिच्चिरमुवास।

शब्दार्थ—पालयति महीं —पृथ्वी का पालन करते हुए। चित्र कर्मसु चित्र कलाओं में। वर्ण संकरा अनेक रङ्गों का मेल। छत्रेषु—छात्रों में। कनकदण्डाः—स्वर्णदंड। गवाक्षेषु झरोखों में। जलमार्गाः जालियां। दुरंगेषु—घोड़ों में। परलोकाद्—परलोक से। करग्रहम् हाथ पकड़ना विवाह करना कशाभिघातः—कोड़ी को मारना। नेत्रवत्या—नेत्रवदी नदी से। परिगत घिरी हुई। विदिशाभिधाना, विदिशा नाम की। भुजेन—अपनी बांहों के द्वारा। भुवनभारमुदवहन पृथ्वी के भार को वहन करता हुआ। अक्षुब्धैः—लोभरहित। अपृथ्वैः—चतुर। अमात्यैः मन्त्रियों से। समानवयोविद्यालङ्कारैः—समान आयु, विद्या, अलङ्कारों वाले। राजपुत्रैः सह—राजकुमारों के साथ।

रममाणः—रमण करता हुआ। प्रथमे वयसि—युवावस्था में। सुखमतिचिरमुवास

बहुत समय तक सुखपूर्वक रहा।

भावार्थ—जिस राजा ने सम्पूर्ण संसार को जीतने पर पृथ्वी का राज्य करते हुए चित्रकलाओं में रङ्गों का मेल होता था, प्रजा में वर्ण शङ्कर नहीं होता था (प्रजा सच्चरित्र थी) उसकी प्रजा शास्त्रों में ही चिन्तन किया करती थी प्रजा को और किसी प्रकार की चिन्ता नहीं थी (अर्थात् प्रजा शास्त्राध्ययन में निरत थी) गर्मी को दूर करने वाले छत्रों में ही सोने के डन्डे थे। प्रजा को किसी प्रकार का दण्ड नहीं दिया जाता था, झरोखों में ही जालियां थी प्रजा में किसी प्रकार का छल कपट नहीं था। जिसको प्रजा को परलोक का भय था और किसी प्रकार का भय उसके राज्य में नहीं था। विवाह के समय पति पत्नी का हाथ पकड़ता था राज्य में किसी प्रकार का टैक्स नहीं लिया जाता था घोड़ों के ऊपर कोड़ों का प्रहार किया जाता था दण्ड रूप में किसी को कोड़े नहीं मारे जाते थे। उस राजा की वेगवती नदी से गिरि विदिसा नाम की राजधानी थी। वह राजा शूद्रक उस नगरी में अपनी बुद्धि से पृथ्वी के भार को वहन करता हुआ लोभ रहित प्रेम पात्र तथा चतुर मन्त्रियों से घिरा हुआ अवस्था विद्या और आभूषणों में अपने समान राजकुमारों के साथ रमण करता हुआ अपनी युवावस्था में बहुत दिनों तक सुखपूर्वक रहा।

समास—भुवन भारमुदवहन् भुवनस्य भारं भुवन भारः तत्पुरुष उदवहने इति भुवनभारमुदवहन उपपद समास। वयश्च विद्या च अलङ्कारश्च वयोविद्या-लङ्काराः द्वन्द्व समास वयोविद्यालंकाराः त बहुव्रीहि।

पृष्ठ ४ (३) सत्यपि··· ··· ··· ··· ··इत्यादि देशः।

शब्दार्थ सत्यपि होते हुए भी। हृदयहारिणी—हृदय को भुलाने वाली। अवरोध ने—स्त्रियों के। सङ्गीतकप्रसङ्गेन—गान से। मृगया व्यापारेण शिकार खेलने से। सुहृत परिवृतः—मित्रों से घिरा हुआ। अनैषीयत्—व्यतीत करता था। नातिदूरोदित थोड़ी दूर पर उदित हुए। भगवती सहस्त्र मरीचिमालिनी—भगवान सूर्य के। राजानमास्थानमण्डपगतम् राजा की सभा में बैठे हुए। प्रतिहारि पहरेदार। समुपसृत्य पास जाकर। सविनयमब्रवीत निनयपूर्वक बोला। दक्षिणापथादागता दक्षिण से आई हुई। शुकमादा तो

को लेकर। विज्ञापयति - निवेदन करती है। देवपाद मूलमनमादाय - आपके चरणों में इसे लेकर। आगताहम् - मैं आई हूं। ऐतदा कर्ण्य यह सुनकर। देव प्रमाणम् आपकी जैसी इच्छा। इत्युक्तिया यह कहकर। विरराम — चुप हो गया। उपजातकुतूहल: आश्चर्ययुक्त। समीपवर्तीनाम् — पास में बैठे हुए। को दोष: — क्या दोष है। प्रवेश्यताम्—बुलाओ। इत्यादिदेश यह आज्ञा दी।

सन्दर्भ — इस गद्यांश में लेखक राजा शूद्रक का उस समय का वर्णन करता है। जब वह राजकुमारों के साथ क्रीड़ा करता हुआ कार्य कर रहा था।

भावार्थ — राजमहल में हृदय के हरण करने वाली स्त्रियों के रहते हुए भी राजा शूद्रक कभी सङ्गीत से, कभी शिकार खेलने से, कभी शास्त्रीय बातों से, मित्रों से घिरा हुआ समय व्यतीत करता था। एक बार जब सूर्य को उदय हुए थोड़ा समय हुआ था तब राजसभा में बैठे हुए राजा के पास आकर पहरेदार ने विनयपूर्वक कहा कि देव! दक्षिण देश से आई हुई द्वार पर खड़ी हुई एक चाण्डाल कन्या पिंजरे में तोते को लिए हुए आपसे निवेदन करती है कि इस तोते को लेकर आपके चरणों में आई हूं तथा आपके दर्शन करना चाहती हूं। यह आपकी जैसी इच्छा इतना कहकर पहरेदार चुप हो गया। आश्चर्य युक्त राजा के पास बैठे हुए राजाओं के मुंह की ओर देखकर कहा कि क्या दोष है बुलाओ।

समास—सहस्रमरीचिमालिनी सहस्रमरीचिनां माला; सहस्रमरीचिमाला षष्ठी तत्पुरुष, स अस्ति स महस्रमरीचिमाला तस्मिन् सहस्रचिमालिनि बहुव्रीहि। उपजातकुतूहल उपजात: यस्य स उपजाता कुतूहल: बहुव्रीहि।

पृष्ठ १४ (४) प्रथम् ....तदभिमुखमासीत।

शब्दार्थ मतङ्गकुमारीम् —चाण्डाल कन्या को। प्रवेशयत् - प्रवेश कराया। नरपतिसहस्रमध्यवर्तितम् हजारों राजाओं के बीच में बैठे हुए। इन्दुकान्तमणिपर्यंक निपण्णम्—चन्द्रकान्त मणियों के सिंहासन पर बैठे। स्फटिकपादपीठे —संगमरमर की चौकी पर। विन्यस्तवामपादम् बांया पैर रखे हुए। चरणनखमयूख-जालङ्कृतशोभिताम्—पैरों के नखों की किरणों के समूह से सुशोभित।

राजानमदाक्षीत् — राजा को देखा। आलोक्य — देखकर। दूरस्थितैव — दूर से ही। पाणिना — हाथ से। जर्जरितमुखभागाम्—फटे मुंह वाली। वेणुलता—बांस के डण्डे को। नरपतिप्रबोधनार्थ — राजा को सूचित करने के लिए। सकृत्—एक बार। कुट्टिमम्—फर्श को। आजघान — ताडित किया।

भावार्थ — इसके बाद प्रतिहारी ने उस चाण्डाल कन्या को प्रवेश कराया उसने प्रविष्ट होकर हजारों राजाओं के बीच में चन्द्रकान्त मणि से निर्मित सिंहासन पर बैठे हुए संगमरमर की चौकी पर बांया पैर रखे हुए तथा पैरों के नखों की किरणों के समूह से सुशोभित राजा को देखा। उस चाण्डाल कन्या ने राजा को देखकर दूर से ही एक पतली सी बांस की लकड़ी हाथ में लेकर राजा को सूचित करने के लिए एक बार सभा के फर्श को ताड़ित किया जिससे सब राजा नरपति की ओर से दृष्टि हटाकर उसी की ओर देखने लगे।

समास—नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनम्—नरपतिनां सहस्रं नरपतिसहस्रं षष्ठी तत्पुरुष तस्मिन् मध्ये वर्तते यः सः तम् नरपतिसहस्रमध्यवर्तिनम् बहुव्रीहि। स्फटिकपादपीठे, स्फटिकस्य पादपीठः स्फटिकपादपीठः तस्मिन् स्फटिकपादपीठे षष्ठी तत्पुरुष। विन्यस्तवाम् पादम् विन्यस्तः वाम पादः येन सः। जर्जरिमुखभागां जर्जरितो मुखभागो यस्याः सा ताम् जर्जरितमुखभागां बहुव्रीहि। नरपति बोधनार्थं नरपतेः प्रबोधनार्थं, षष्ठी तत्पुरुष। सभाकुट्टिमम् सभायां कुट्टिमः तम् सभा कुट्टिमम् षष्ठी तत्पुरुष।

पृष्ठ १४–१५ (२) अवनिपतिस्तु··········न्यवेदयन्नवोचच्च।

शब्दार्थ निर्दिश्यमानां दिखाई हुई। अधिष्ठितपुरोभागाम्—आगे किये हुए। चाण्डालदारकेण चाण्डाल कन्या के। अनुगम्यमानाम् पीछे चलते हुए, अतिशयरूपाकृतिम् अत्यधिक रूप वाली को। अनिमेषलोचनो—बिना पलक मारे। समुपजात विस्मयः आश्चर्यान्वित हुए। अस्थाने—अनुपयुक्त स्थानों में रूपनिष्पादनप्रयत्नः—रूप उत्पादन करने का प्रयत्न। असदृशसंयोग कारिणम् — बेमेल मेल करने वाले। चिन्तयन्नेव—विचार करते हुए ही। कृतप्रणामायां च —प्रणाम करने पर। विहङ्गमादाय — पक्षी को लेकर। पंजरगतमेव—पिंजरे

में स्थित करके । किंचिदुपसृत्य—कुछ पास जाकर ।

भावार्थ—राजा ने प्रतिहारी के द्वारा मार्ग दिखाई गई श्वेत वस्त्रों वाली चाण्डाल कन्या की अत्यधिक रूप वाली आकृति को बिना पलक मारे देखा । उसको देखकर राजा के मन में बड़ा आश्चर्य हुआ—आह ! ब्रह्मा का अनुपयुक्त स्थान में रूप उत्पादन करने का प्रयत्न है । असमान मेल कराने वाले ब्रह्मा को सब प्रकार से धिक्कार है । राजा के इस प्रकार कहते हुए उस चाण्डाल कन्या ने राजा को प्रणाम किया, चाण्डाल कन्या के प्रणाम करने पर उस पुरुष ने पिंजरे में स्थित हुए उस पक्षी को लेकर तथा कुछ पास जाकर राजा से निवेदन किया और कहा ।

समास—शुभ्रवाससा शुभ्राणि वासांसि यस्य असौ तेन शुभ्रवाससा। बहुव्रीहि । अधिष्ठितपुरोभागाम् अधिष्ठितः पुरोभागो यस्याः सा ताम् अधिष्ठित पुरोभागाम् बहुव्रीहि । चाण्डालदारकेण, चाण्डालस्य दारकः चाण्डालदारकः तेन चाण्डाल-दारकेण षष्ठी तत्पुरुष । असदृशसंयोग कारिणम्, न सदृशम् असदृशं संयोगं करोतिः यः तम् असदृशसंयोग कारिणम् बहुव्रीहि कृतप्रणामायाम् कृतः प्रणामो यथा सा कृत णामा, यस्यां कृतप्रणामायाम् बहुव्रीहि ।

पृष्ठ १५ (६) देव ! विदितसकल······ ···इमाम् पपाठ ।

शब्दार्थ विदितसकलशास्त्रार्थः—सम्पूर्ण शास्त्रों को जानने वाला । पुराणेतिहासकथासु—पुराण इतिहास की कथाओं में । चित्रकर्मणि—चित्रकला में । सकल-भूतल-रत्न-भूतः—सम्पूर्ण पृथ्वी पर रत्न के समान । क्रियताम्—करो । निधाय—रखकर । अपससार दूर हट गया । राजाभिमुखोभूत्वा—राजा के सामने होकर । अतिस्पष्टवर्णं गिरा—बहुत स्पष्ट वर्णों वाली वाणी से । राजानमुद्दिश्य—राजा को लक्ष्य करके । पपाठ पढ़ा ।

सन्दर्भ—पिंजरे में स्थित उस तोते को राजा के सम्मुख रखकर उस पुरुष ने—

भावार्थ भगवान सम्पूर्ण शास्त्रों को जानने वाला, राजनीति में कुशल पुराण, इतिहास की कथाओं को जानने वाला चित्रकला में चतुर सम्पूर्ण पृथ्वी पर रत्न के समान यह वैशम्पायन नाम का तोता है । प्रभु आप इसे ले लो

इस प्रकार कहकर राजा के सामने पिंजरे को रखकर दूर हट गया, उस पुरुष के हट जाने पर उस तोते ने राजा के सामने होकर अत्यन्त स्पष्ट वर्णो वाली वाणी से जयकार करके तब राजा को लक्ष्य करके यह श्लोक पढ़ा।

समास 'विदितसकल- शास्त्रार्थः शास्त्राणाँ—अर्थः—शास्त्रार्थ (षष्ठी तत्पुरुष) विदितसकलः शास्त्रार्थोयेन असौ विदितसकल—शास्त्रार्थं (बहुव्रीहि)। राजनीति कुशलः राजनीतौ कुशलः राजनीति- कुशलः (सप्तमी तत्पुरुष)। पुराणेतिहास कथासु पुराणश्च इतिहासश्च पुराणेतिहासः द्वन्द्व तेषां कथा, तासु पुराणेतिहास कथासु (षष्ठी त्पुरुष)। सकलभूतलरत्नभूत सकलभूतलस्य रत्न-भूतः सकलभूतलरत्नभूतः (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ १५ श्लोक स्तनयुगमश्रुस्नातं ········ रिपुस्त्रीणाम्।

शब्दार्थ—भवतः—आपकी। रिपुस्त्रीणांम् - शत्रुओं की स्त्रियों के। स्तनयुगम् दोनों स्तन। अश्रुस्तादम् · आंसुओं से स्नान करते हैं। समीप-तरवर्तितहृदय शोकाग्नेः—समीप में स्थित हृदय को शोकाग्नि से। वृतमिव—व्रत का। चरित—चरते हैं।

सन्दर्भ तोते ने राजा को लक्ष्य करके श्लोक पढ़ा

भावार्थ आपके शत्रुओं की स्त्रियों के दोनों स्तन आंसुओं से स्नान कर हैं तथा हृदय की शोकाग्नि के निकट रहते हुए मोतियों के हार को छोड़कर व्रत का आचरण करते हैं। 'अर्थात्' आपके शत्रुओं की स्त्रियों के स्तन योगी की भांति व्रत का आचरण करते हैं योगी जल से स्नान करता है तो वे आंसुओं से स्नान करते हैं योगी अग्नि के पास रहता है तो वे हृदय में स्थित शोकाग्नि के पास रहती हैं। योगी व्रत में आहार (भोजन) छोड़ देता है तो इन्होंने मोतियों का हार छोड़ दिया है।

समास स्तनयुगम् स्तनयो युगम् स्तनयुगम् (षष्ठी तत्पुरुष) अश्रुस्नात अश्रुणास्नात् अश्रुस्नात (तृतीया तत्पुरुष)। विमुक्तमुक्ताहारम् विगतो मुक्ताहारो येन असौ तम् विमुक्ताहारम् (बहुव्रीहि) विमुक्तः आहारो येन असौ तम् विमुक्ता-हारम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ १५ (राजा) तु··· ······आस्थानमन्डरादत्तस्यौ।

शब्दार्थ संजातविस्मय - आश्चर्यान्वित होने। सहर्षम् हर्ष पूर्वक।

आसन्नवर्तिनम्—पास में बैठे हुए। अशेषनीतिपारगतम्—सम्पूर्ण नीति को जानने वाले। परिस्फुटाक्षरम्—स्पष्ट अक्षरों वाली। इत्येवं व्याहरति एव—इस प्रकार कहते हुए ही। मध्याह्नशङ्खध्वनि: उदतिष्ठत—दोपहर की शङ्ख ध्वनि हुई। विसर्जितराजलोक:—सम्पूर्ण राजाओं को विदा करके।

सन्दर्भ—तोते के इस श्लोक को सुनकर राजा को बहुत आश्चर्य हुआ तथा मन्त्रियों के सामने उसकी प्रशंसा करते हुए कहने लगा।

भावार्थ—राजा ने उस शब्द को सुनकर आश्चर्यान्वित होकर तथा प्रसन्नतापूर्वक पास में बैठे हुए सम्पूर्ण नीति शास्त्र को जानने वाले मन्त्रिमण्डल में प्रधानमन्त्री कुमार पालित को कहा कि आपने इस पक्षी की वर्णों के उच्चारण में स्पष्टता तथा स्वर में मधुरता को सुना है फिर भी इस तोते ने जय शब्द उच्चारण करके यह आर्य छन्द मुझे उद्देश्य करके स्पष्ट शब्दों में गाया है। राजा के इस प्रकार कहते हुए दोपहर की शङ्ख ध्वनि हो गई उसको सुनकर राजा ने सम्पूर्ण राजाओं को विदा कर दिया तथा स्नान के लिए सभा मण्डप से उठ गया।

समास—आसन्नवर्तिनम् आसन्नवर्तते इति आसन्नवर्ति, तम् आसन्नवर्तिनम् उपपद समास।

पृष्ठ १५–१६(८) अर्थ विसर्जित .... आसांचक्रे।

शब्दार्थ—विसर्जितराज लोक:—राजाओं को विदा करके। अभिधाय—कहकर। अभ्यन्तरम्—अन्दर। ताम्बूलकरंकवाहिनीम्—पान के डिब्बे को लाने वाले। आदिश्य—आज्ञा देकर। अपनीताशेषभूषण—सम्पूर्ण आभूषणों को उतार कर। समुचितव्यायामोपकरणां—चित व्यायाम की सामग्री वाली। व्यायाम भूमिमयासीत्—व्यायाम भूमि को प्राप्त हुआ। वाराङ्गना:—वेश्या। उदपादि—उठाई। अतिमुखर:—गूंजती हुई। मन्त्रपूतेन—मन्त्रों द्वारा पवित्र। उपरचितपशुपतिपूजनस्य—भगवान शङ्कर का पूजन करने के बाद। खड्गवाहिन्या—तलवार लाने वाली दासी से। संवाह्यमानचरण:—पैरों को दबाते हुए। आसांचक्रे—बैठ गया।

भावार्थ—[illegible] बाद राजाओं को विसर्जित करके [illegible] कन्या को "आराम करो", इस प्रकार स्वयं ही कहकर तथा ताम्बूल लाने वाली को

"वैशम्पायन को अन्दर ले जाओ ।" यह आदेश देकर कुछ राजकुमार के साथ राजा अन्दर चला गया । सम्पूर्ण आभूषणों को उतारकर उचित व्यायाम की सामग्री से युक्त व्यायाम भूमि को प्राप्त किया व्यायाम भूमि मे राजा अपने समान आयु वाले राजकुमारों के साथ सुन्दर व्यायाम करने पर स्नान कलशों से सुशोभित स्नान में वैश्याओ ने क्रमशः राजा को स्नान कराया इसके बाद स्नान शङ्खो की अत्युच्च ध्वनि प्रकट हुई । इस प्रकार क्रमशः स्नान करने पर भगवान सूर्य को प्रणाम करके मन्दिर में गया । भगवान शङ्कर के पूजन के पश्चात राजाओं के साथ भोजन किया । इसके बाद बिस्तर पर बैठे हुए तलवार लाने वाली दासी से पैर दबाते हुए राजाओं मन्त्रियों तथा मित्रों के साथ इधर उधर की कथा करते हुए क्षण के लिए बैठा ।

समास—ताम्बूलकरवाहिनीम् ताम्बूलकरक वहतीतिताम्बूलकरकम्वहिनी सा ताम् ताम्बूल करकं वाहिनीम् उपपद समास अपनीताशेषभूषण अपनी तानि अशेषभूषणानि येन स अपनीतानेषभूषण: बहुव्रीहि समुचितानि व्यायामोकरणानि यस्यां सा ताम् समुचित व्यामोपकरणां (बहुव्रीहि) । उपचरित पशुपतिपूजन: उपरचित: पशुपतिपूजने येन स: उपचारित पशुपतिपूजन: (बहुव्रीहि) ।

पृष्ठ १६ (६) तनोदाति·········· अभूतीयते इति ।

शब्दार्थ—राजान्तिकम् राजा के पास । अशनजातम् – खाद्य पदार्थ भोजन समूह । अभिमतम् इच्छित । प्रकामापीतो जम्बूफलरस तृप्ति पर्यन्त जामुनों का रस पिया । प्रलपितेन—प्रलाप करने से । करतलोपनीयमानम् मेरे लिए हाथ पर लाये हुए । अमृतायेन – अमृत जैसे ।

भावार्थ—इसके बाद में स्थित प्रतिहारी को आदेश दिया कि अन्त:पुर से वैशम्पायन को ले जाओ । कुछ देर बाद ही वैशम्पायन धीरे धीरे चलने वाले कञ्चुकी का अनुगमन करता हुआ राजा के पास आ गया । कञ्चुकी नें विनय पूर्वक राजा से निवेदन किया कि महाराज ! रानियाँ निवेदन करती हैं कि—आपकी आज्ञानुसार यह वैशम्पायन स्नान किया हुआ तथा भोजन आदि से निवृत्त प्रतिहारी द्वारा आपके पास लाया गया है । इस प्रकार कञ्चुकी के कहने पर राजा ने वैशम्पायन से पूछा क्या आपने अपनी इच्छानुसार

भोजन कर लिया है ? तोते ने महाराज को कहा- महाराज क्यों नहीं सब कुछ

आस्वाद लिया है। लाल और नील रङ्ग के कड़वे मीठे जामुन के रस को तृप्ति पर्यन्त पिया है। अनारों को काटा है तथा इच्छानुसार आंवले के फलों का मर्दन किया है। अधिक प्रलाप करने का क्या लाभ स्वयं रानियों द्वारा अपने हाथों से लाई हुई भोजन सामग्री अमृत के समान सुख देने वाली थी।

समास—मन्दमन्दसञ्चारिणा—मन्द मन्द सञ्चरते इति मन्द सञ्चरी तेन मन्दमन्दसञ्चारिणा (उपपद समास)। कृताहारः कृतः आहारो येन सः कृताहारः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ १६–१७ (१०) एवंवादिनो ………आकर्ण्यताम्।

शब्दार्थ—आक्षिप्त रोक कर। अपनयतु दूर करो। आत्मनो वृत्तम् - अपना समाचार। वेदानामागमः—वेदो का ज्ञान। समासादिता—प्राप्त की। चाण्डालहस्तगमनम्—चाण्डाल के हाथ में जाना। सबहुमानम् बहुत आदर के साथ। महतीयम् कथा—यह कथा बहुत बड़ी है।

भावार्थ तोते के इस प्रकार कहते हुए उसकी बात रोककर राजा ने कहा कि बैठिये, यह सब ठीक है हमारे आश्चर्य को दूर कीजिए। आप आरम्भ में अपना समाचार सुनाईये। किस देश में आपका जन्म हुआ? कैसे आप उत्पन्न हुए? तुम्हारी माता कौन है? तुम्हारे पिता कौन हैं? वेदों का ज्ञान कैसे हुआ? शास्त्रों से परिचय कैसे हुआ? कहां आपने कलायें सीखी है? तुम्हारी आयु कितनी है?. पिंजरे में कैसे आये? चाण्डाल के हाथ में कैसे आये? यहां कैसे आये? इस प्रकार आश्चर्यान्वित राजा के आदरपूर्वक पूछने पर वैशम्पायन एक क्षण ध्यान लगाकर, आदरपूर्वक बोला—महाराज! यह कथा बहुत बड़ी है। यदि आपको आश्चर्य है तो सुनो।

पृष्ठ १७ (११) अस्ति……… …प्रति वसन्तिस्म।

शब्दार्थ—मेखलेव - तगड़ी के समान। पादपैरुपशोभिता - वृक्षों से सुशोभित। पल्लवचयेन—पत्तों के समूह से। आच्छादिता—ढकी हुई। तमालनील—तम्बाकू के समान नीलवर्ण। वानराक्रान्ता - बन्दरों से युक्त। वेत्रलताशतदुष्प्रवेशा—सैंकड़ो बांस की लताओं के होने के कारण बहुत कठिनता से प्रवेश करने योग्य। चापघोषस्य—धनुष की आवाज। शष्पकवलम् घास के ग्रास। जहार—हर ले गया। वनकरिभिः—वन के हाथियों से। आपीयमानसलिलम्

—जल पिया हुआ। अप्रतिमम्—बहुत बड़े आकार वाला। …निधान पानी का खजाना। पद्मसरः—कमलों का तालाब। शाल्मली वृक्षः—सैंमल का पेड़। पल्लवान्तरेषु—पत्तों के नीचे। विरचितकुलायानि—घोंसले बनाये हुए। शकुनि—पक्षी। प्रतिवसन्तिस्म—रहते थे।

सन्दर्भ—राजा के पूछने पर तोते ने बताया—

भावार्थ—मध्य प्रदेश की भूषण स्वरूप पृथ्वी की मेखला के समान वृक्षों से सुशोभित पत्तों के समूह से ढकी हुई, लताओं से सुशोभित, तम्बाकू के समान नीले रङ्ग की, बन्दरों से युक्त, सैकड़ों बेत लताओं के कारण कठिनता से प्रवेश करने योग्य विन्ध्याटवी नाम का वन है। उसमें गोदावरी नदी में घिरा हुआ महामुनि अगस्त्य का आश्रम था। जहाँ आज भी रामचन्द्र के धनुष की आवाज का स्मरण करते हुए सीता जी द्वारा पाले हुए हरिण घास नहीं खाते हैं, जहाँ पर सोने का मृग राम को दूर हर ले गया था। अगस्त्य मुनि के आश्रम के पास ही वन हाथियों ने जल पिया जो बहुत गहरा बहुत आकृति वाला, पानी का खजाना, पम्पासर नाम के कमलों का तालाब था। उस तालाब के पश्चिमी किनारे पर बहुत पुराना सैंमल का पेड़ था, उस पेड़ पर …… पत्तों के नीचे घोंसला बनाये हुए तोते तथा दूसरे पक्षियों के समूह रहते थे।

समास—मध्य देशालङ्कारभूता मध्य देशस्य अलङ्कारभूता मध्यदेशालङ्कारभूता (षष्ठी तत्पुरुष)। वेत्रलताशतदुष्प्रवेशा वेत्रलतानां शतम्, वेत्रलताशतं तेन दुष्प्रवेशा वेत्रलताशतदुष्प्रवेशा (षष्ठी तत्पुरुष)। चापस्य घोष, चाप घोष तस्य चापघोषस्य (षष्ठी तत्पुरुष)। अप्रतिमम्—नास्ति प्रतिमा यस्य … त अप्रतिमम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ १७—१८ (१… तत्रैव…………………जरत्कोटरम्।

शब्दार्थ—जीर्णकोटरे—पुरानी खोखर में। … पत्नी के साथ पश्चिमे वयसि—वृद्धावस्था में। अभिभूता—पीड़ित हुई। लोकान्तर मगमत्—मर गई। अभिमत-जाया-विनाश-दुःखितः—अभीष्ट पत्नी के विनाश से दुःखित। अन्तः निगूह्य—अन्दर रोककर। तरुमूलनिपतितानि—पेड़ों की जड़ में हुए। फलशकलानि—फलों के टुकड़े। संगृह्य—इकट्ठा करके। उपभुक्तशेषे खाने से बचा हुआ।

उसमें वैशम्पायन नामक तोता राजा को अपनी कहानी सुनाता हुआ कहता है

भावार्थ—उस शाल्मली वृक्ष की एक पुरानी खोखर में अपनी पत्नी के साथ रहते हुए वृद्धावस्था में अपने पिता का मैं ही भाग्यवान एक पुत्र हुआ। मेरे पैदा होने की अत्यधिक प्रसव पीड़ा से पीड़ित मेरी माता परलोक सिधार गई। अभीष्ट पत्नी के विनाश से दुःखी मेरे पिता उस शोक को अन्दर ही रोक कर मेरा पालन करने लगे। इधर उधर घूमने में असमर्थ होने के कारण मेरे पिता वृक्षों के नीचे पड़े हुए फलों के टुकड़ों को इकट्ठा करके मुझे देते थे तथा नित्य प्रति मेरे खाने से बचे हुए फलों का ही भोजन करते थे।

समास—अभिमतजायाविनाशदुःखित अभिमत जायायाः विनाशः तेन दुःखितः (तत्पुरुष)। तरुमूलपतितानि—तरूणां मूलानि तरुमूलानि (षष्ठी तत्पुरुष)। तेषु निपतितानि तरुमूलनिपतितानि (सप्तमी तत्पुरुष)।

पृष्ठ (१३) एकदा................. शबर सैन्यतद्राक्षम्।

शब्दार्थ वालातपे—नवीन प्रकाश। प्रत्युषसि—प्रभात। पक्ष पुटान्तरम्—पैरों के बीच में। अविशम् घुस गया। वनवराहयूथम—वन के सुअरों का समूह। वनमहिषवृन्दम्—वन के भैंसों का समूह। श्वानः—कुत्ते। मृगयासक्तस्य शिकार खेलने में लगे। शिरोधरा—गर्दन को। प्रसार्य—फैलाकर। प्राहिणावम् डाल दी। अद्राक्षम् देखा।

भावार्थ एक दिन वन में प्रातः सूर्य की किरणे पड़ते हुए तथा अच्छी प्रकार प्रभात के स्पष्ट होने पर अचानक ही उस वन में शिकार खेलने का कोलाहल का शब्द हुआ। उस शब्द को सुनकर मैं डर से बेचैन हुआ पास में बैठे एहु पिता के पंखों के बीच में घुस गया। इसके बाद इधर वन के हाथियों का समूह है इधर वन सुअरों का समूह, इधर वन के भैंसों का समूह है। इस दिशा में देखो यह शब्द सुनो, धनुष पकड़ लो, कुत्तों को छोड़ दो, शिकार खेल ने में लगे हुए मनुष्यों के समूह के समूह इस प्रकार एक दूसरे को कहते हुए, जिससे वन भी दुःखी है ऐसे कोलाहल को सुना। इसके बाद कुछ क्षण में शेरों की दहाड़ से, हाथियों की चिंघाड़ से, भागतों की आवाज से वह वन इधर उधर

चलता सा मालूम हुआ। कुछ देर बाद उस कोलाहल के शांत होने पर पिता की गोद से कुछ बाहर निकलकर खोखर में बैठे हुए ही गर्दन को फैलाकर यह क्या है, इस प्रकार देखने की इच्छा से उस दिशा में ही अपनी दृष्टी घुमा दी। दूसरे वन में सामने से आती हुई हजारों की संख्या वाली, बहुत डर उत्पन्न करने वाली भीलों की सेना को देखा।

समास महिषाणाँ वृन्दम् वनमहिषवृन्दम् (षष्ठी तत्पुरुष)। क्षोभितम् कानन येन सप्तमे क्षोभित काननम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ १८–१६ (१४) मध्ये च..................समुपाविशत्।

शब्दार्थ—जन्मान्तरागतम्—दूसरे जन्म में आये। अभिधानम् नाम। मोहप्रायम् - अज्ञान से भरा हुआ। साधुजन विगर्हितम् - सज्जन पुरुषों द्वारा निन्दित। शिवारुतम् –सियारिनों की बोली। उपदेष्टारः — उपदेश करने वाले कौशिकाः —उल्लू। सायकाः बाण। शारदूलैः सह — लकड़बघ्घों के साथ। आगरा.. उबटन। उत्खातमूलशेषतः उखाड़ना। परिजनोपनीतपल्लवासन साथियों से लाये हुए पत्तों के आसन पर। समुपाविशत बैठ गया।

भावार्थ उस बहुत बड़ी भीलों की सेना के बीच से युवावस्था को प्राप्त दूसरे जन्म एकलव्य की भांति भीलों के समूह से घिरे हुए मातङ्ग नाम के भीलों के सेनापति को देखा। उसका नाम तो मैंने बाद में सुना। मेरे मन में आया अहो! इनका भोजन सज्जनों से निन्दित शराब तथा मांस है। शिकार खेलने से ये शक्ति साधन करते हैं, सियारिनों की आवाज ही इनका शास्त्र है, उल्लू सत्य और असत्य का उपदेश करने वाले हैं, क्रूर कर्म को सिद्ध करने वाले धनुष इनके मित्र हैं, बाण इनकी सहायता देने वाले हैं, व्याघ्रों के साथ रहते हैं, पशुओं के रक्त से देवताओं की पूजा करते हैं, चोरी से जीवन चलाते हैं तथा वन के हाथियों का मद इनका उबटन है। जिस वन में रहते हैं उसको ही जड़ से उखाड़ देते हैं मेरे इस प्रकार सोचते हुए ही थकावट को दूर करने की इच्छा वाला वह भीलों का सेनापति उसी सेंभल के पेड़ की छाया के नीचे साथियों द्वारा लाये हुए पत्तों के आसन पर बैठ गया।

समास—साधुजनविगर्हितम् साधुजनैः विगर्हितम साधुजनविगर्हितम् (तृतीया तत्पुरुष । वनगज मदै — वनगजानाम् मद गमग्रजमदः तैं वनगजमदैः (षष्ठी तत्पुरुष) ।

पृष्ठ १६–२० (१५) अन्यतमस्तु..................नाशीर्यन्त ।

शब्दार्थ अन्यतम:—दूसरा । हिमजड़म्—बर्फ से ठन्डा । अम्भः—जल । मृणालिका—भिस पुलिन्दवृदात्—भीलों के समूह से । जरच्छवर बूढ़ा भील । अतिविकृतदर्शन बड़े भयङ्कर दर्शन वाला । पिशितार्थी मांस की इच्छा वाला । व्यलम्बत रुक गया । अयत्नेनैव - आसानी । अपगतासुम् मारकर । क्षितौ पृथ्वी पर । उपनतम् समीप आई । विक्षिपन्—फेंकते हुए स्नेहपरवश स्नेह के वश में हुए । विलीनः छिपा हुआ । नाशीर्यन्त – नष्ट नहीं हुए, चोट नहीं आई ।

भावार्थ—एक दूसरा भील उस तालाब से ठण्डा जल तथा तत्काल ही खोदी हुई भिस लाई, जल पीने के पश्चात शबर सेनापति ने भिस को खाया एक बूढ़ा भील भयङ्कर आकृति वाला मांस की इच्छा से एक क्षण के लिए उस पेड़ के नीचे रुक गया शबर सेनापति के दूर जाने पर पेड़ पर चढ़ने की इच्छा करने वाले बूढ़े भील ने एक भीषण दृष्टि से उस पेड़ को ऊपर से नीचे तक देखा । निर्दयी क्या दुष्कर्म नहीं करते अर्थात सब दुष्कर्म करते हैं, क्योंकि उसने आसानी से पेड़ पर चढ़कर तोतों के बच्चों को पकड़ लिया तथा उनको मार कर जमीन पर फेंक दिया । उस विपत्ति को निकट आते देखकर दु.ख से भरी आँखों को इधर उधर फेंकते हुए पैरों के बीच में मुझे छिपाकर स्नेह के वश में हुए मेरी रक्षा के लिए व्याकुल हुए कर्त्तव्य से निहित हुए मेरे पिताजी मुझे गोद में छिपाकर बैठ गये । उस पापी ने भी क्रमशः शाखाओं पर घूमते हुए घोसले के द्वार पर आकर अपनी कठोर भुजा को फैलाकर बार २ तथा चोंच का प्रहार करते हुए तथा चिल्लाते हुए मेरे पिताजी को खींचकर मार दिया । छोटा शरीर होने से डर से अङ्ग सिकुड़े हुए होने से तथा आयु शेष होने के कारण उनके पैरों के बीच में छिपे हुए मुझको न जान सका । पिताजी के मार जाने पर उनको पृथ्वी पर फेंक दिया । मैं भी उनकी गोद में छिपा हुआ उनके

साथ ही गिर पड़ा । आयु शेष होने के कारण हवा के द्वारा इकट्ठे हुए सूखे हुए पत्तों के ढेर पर अपने को गिरा हुआ देखा, जिससे मेरे शरीर में चोट नहीं आई, मेरे अङ्ग नहीं टूटे ।

समास अपगतश्रमः—अपगतः श्रमो यस्य सः । शुकशावकान् शुकानां शावकान् शुकशावकान् (षष्ठी तत्पुरुष) । अपगतासून् अपगताः असवः येषाम् ते अपगतासवः तान् अपगतासून् (बहुव्रीहि) । स्वल्पशरीरत्वात् स्वल्प शरीर तस्य तस्य भावः । तस्मात् स्वल्पशरीरत्वात् (बहुव्रीहि) । भय सम्पिण्डिताङ्गत्वात् भयेन सम्पिण्डितानि तृतीया तत्पुरुष, भय सम्पिण्डितानि अङ्गानि यस्य स तस्य भाव तस्मात् । भयसम्पिण्ठिताअङ्गत्वात् (बहुव्रीहि) ।

पृष्ठ २० (१६) यावदासौ .... मकाभूत्मनसि ।

शब्दार्थ—उत्सृज्य—छोड़कर । अभिभूयमानः पीड़ित होता हुआ । लुठन् लौटता हुआ । तमालविटपिनः तम्बाकू के पेड़ों वाले । क्षितितलविप्रकीर्णान—पृथ्वी पर बिखरे हुए । लब्धोजीविताश—जीवन की आशा को प्राप्त परिकल्प—सोचकर । निष्क्रम्य निकलकर । श्वसता—सांस लेते हुए ।

सन्दर्भ—जब बूढ़े भील ने तोतों के सब बच्चों को मारकर पृथ्वी पर फेंक दिया तथा वैशम्पायन पिता की गोदी से निकल कर चल दिया ।

भावार्थ जब तक वह बूढ़ा भील पेड़ से नहीं उतरा तब तक क्रूर की भांति मैं अपने मरे हुए पिता को छोड़कर केवल डर से पीड़ित होता हुआ इधर उधर लौटता हुआ उस बड़े २ तम्बाकू के पेड़ों वाले प्रदेश में घुसा । वह उतर कर पृथ्वी पर बिखरे पड़े उन तोतों के बच्चों को इकट्ठा करके पत्तों के दोने में बांधकर बड़ी तेजी से सेनापति जिस रास्ते से गया था उसी दिशा की ओर चला गया । जीवन की आशा को प्राप्त हुए मुझे सब अङ्गों को जलाने वाली प्यास ने पराधीन कर दिया । इस समय वह पापी दूर चला गया यह सोचकर मैंने भय से डरी हुई आंखों से इधर उधर दिशाओं को देखकर की तिनके आहट से फिर वहीं लौट आया हूँ इस प्रकार पग पग पर उसकी ही शङ्का करता हुआ उस तम्बाकू के नीचे से निकलकर पानी के पास जाने का प्रयत्न किया । पैर [illegible] मुख की ओर से पृथ्वी पर गिरते [illegible] सांस भरे हुए तथा धूल से सनकर सरकते हुए मेरे मन में आया ।

समास—तरुशिखरात् तरो: शिखर: तस्मात् तरू शिखरात (षष्ठी तत्पुरुष) लब्ध जीविताश—जीवितस्य आशा जीविताश लब्ध जीविताशा येन स लब्ध-जीविताश: (बहुव्रीहि) ।

पृष्ठ २०—२१ (१७) अतिकष्टम्·········· ············उपपादयेत् ।

शब्दार्थ—वृत्तय:—चेष्टायें । जीवितात्—जीवन से । सर्वजन्तूनाम् सब प्राणियों का । अविकलेन्द्रिय: विषय को ग्रहण करने के समर्थ इन्द्रियों वाला । प्राणिमि जीता हूं । अतिनिष्ठुरम्—अत्यन्त कठोर । अकृतज्ञम् अहसान न मानने वाले । अतिकृपण बहुत तुच्छ । स्फुरन्तम् चमकता हुआ । करै:—किरणों से । विकरति—फेंकता है । उपवनयति बढ़ता है । तृषम्—प्यास को अप्रभु—असमर्थ । उपपादयेत्—कर दे ।

सन्दर्भ—पिता की गोद से निकलकर वंशम्पायन तमाल के वृक्षों में घुस गया पर प्यास से बेचैन हो गया तथा पानी की खोज में चलते हुए बार बार पृथ्वी पर गिरते हुए उसके मन में आया कि—

भावार्थ - इस ससार में प्राणियों की प्रवृत्ति बड़ी कष्ट की हालत में जीवन से उदासीन नहीं होती । इस संसार में प्राणियों को जीवन से बढ़कर और वस्तु प्रिय नहीं है । प्रात: स्मरणीय पिता के इस प्रकार मर जाने पर भी विषयों को ग्रहण करने में समर्थ इन्द्रियों वाला मैं अब भी जीता हूं । निर्दयी कठोर तथा अहसान न मानने वाले मुझको धिक्कार है । मेरा हृदय वास्तव में दुष्ट है । मैं वास्तव मैं दुष्ट हृदय वाला हूं । माता के मरने के शोक को रोक कर पिताजी ने जिन जिन उपायों से मुझे पाला उन सबको मैंने एक क्षण में भुला दिया । ये प्राण बड़े तुच्छ हैं जो उपकारी पिता के मरने पर उसके पीछे नहीं जाते हैं तृष्णा किसको सब प्रकार से दुष्ट नहीं बनाती । यह मैं मानता हूं कि यह पानी पीने की मेरी निर्दयता ही है । अब भी तालाब दूर ही है । दिन की यह कष्ट देनें वाली दशा है फिर भी आकाश के बीच में सूर्य अपनी किरणों से प्रकाश को चमकाता हुआ प्यास को अधिक बढ़ाता है मैं असमर्थ हूँ मेरा हृदय बैठा जाता है आँखों के आगे अन्धेरा आ रहा है, यदि इस समय मेरी मृत्यु हो जाती तो क्या अच्छा होता ।

आकुलेन्द्रिय—आकुलानि इन्द्रियाणि यस्य सः आकुलेन्द्रिय (बहुव्रीहि)। शोकावेगम्—शोकस्य आवेगम् शोकावेगम् (षष्ठी तत्पुरुष)। जलाभिलाषा—जलस्य अभिलाषा जलाभिलाषा (षष्ठी तत्पुरुष)। अम्बरतल-मध्यवर्ती, अम्बरतलस्य मध्ये वर्तते यः सः अम्बरतलमध्यवर्ती (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २१ (१८) इत्येवम् ....सरस्तीरमनायत्।

शब्दार्थ - इत्येवम् — इस प्रकार। चिन्तयत्येव—विचार करते हुए। सरसः—तालाब से। नातिदूरवर्तिनो निकट स्थित। महातपा अत्यधिक तपस्या वाले। समानवयोभिः—समान आयु वाले। अपरै दूसरे। स्फटिकेन स्फटिक मणि की बनी हुई। अक्षवलयेन अक्षमाला से। वामांसावलम्बिना बायें कन्धे पर लटकते हुए। उद्भासमान—देदीप्यमान। नीवारमुष्टिपर्वितेन वन के पशु को मुट्ठी से पाले हुए। सिस्नासिः स्नान करने की इच्छा वाला। अकारणमित्राणि—बिना कारण के मित्र। अतिकरुणद्रार्णी - दया से भीगे हुए। समुपजातकरुणः—जिसको दया आ गई। असंजातपक्षपुट जिसके पर नहीं जमे हैं। मुखपरिभ्रष्टेन मुंह से गिरा हुआ। आमीलितलोचनः—आँखे बन्द किए हुए। वियुज्यते—अलग होना। अवतारय—प्राप्त कराओ।

भावार्थ मेरे इस प्रकार विचार करते हुए उस तालाब से थोड़ी दूर पर स्थित तपोवन में महर्षि जाबालि रहते थे उनके पुत्र हारीत समान अवस्था वाले दूसरे मुनि बालकों के पीछे आते हुए उसी रास्ते से स्फुटित मणि से बनी हुई अक्षमाला से सुशोभित, बांये कन्धे पर लटकते हुए हवा के चलने से हिलते हुए, यज्ञोपवीत से, चमकते हुए नीवार की मुट्ठियों से पालित वन मृगों के पीछे आते हुए उसी तालाब पर स्नान करने की इच्छा से आये (जब मैं इस तरह विचार कर रहा था) उस तालाब से थोड़ी दूर तपोवन में महर्षि जाबालि रहते थे। उनके ही पुत्र हारीत, जिनके पीछे समान अवस्था वाले दूसरे मुनियों के बालक आ रहे थे जो स्फटिक मणि से बनी अक्षमाला से सुशोभित तथा हवा के चलने से बायें कन्धे पर लटकते हुए, यज्ञोपवीत के हिलने से जो चमक रहा था नीवार की मुट्ठियों से पोषित वन के हरिण जिसके पीछे आ रहे थे। उसी

के मित्र तथा दूसरों के दुख हरना यह सज्जनों का मन होता है। क्योंकि मुझे उस अवस्था में देखकर दया युक्त होकर उसने निकट के दूसरे ऋषि कुमार से कहा—यह तोते का बच्चा जिसके अभी तक पर नहीं निकले हैं किसी तरह पेड़ से गिर गया है अथवा बाज के मुंह से छोड़ा हुआ हो। इसका जीवन अब थोड़ा ही शेष है, यह आँखों को मीच मीचकर जोर जोर से साँस ले रहा है, वार बार मुंह की ओर से गिर रहा है गर्दन सम्भाल नहीं सकता। अतः जब तक इसके प्राण नहीं निकलते उसके पूर्व ही उसको उठा लो तथा तालाब के पास ले चलो, इस तरह कहकर उसके द्वारा मुझे तालाब के किनारे ले गया।

समास वामांसावलम्बिना वामश्चासौ अंसः वामांसः (कर्मधारय) वामांसे अवलम्बते इति। वामांसावलम्बी तेन वामांसावलम्बी (उपपद समास)। नीवारमुष्टिसंवर्धितेन नीवाराणां मुष्टिका (षष्ठी तत्पुरुष) ताभिः संवर्धितः नीवारमुष्टिसंवर्धितः तेन नीवारमुष्टिसंवर्धित (तृतीय तत्पुरुष)। समुपजातकरुणः समुपजातम् करुणा यस्मिनः समुपजातकरुणः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २२ (१९) उपसृत्य पास जाकर। कतिचित—कुछ। नलिनीपलशस्य—कमलनी पत्ते की। यथायगु चितम्—जैसी उचित थी। स्नानविधिम् स्नान किया। अभिषेकावसने—स्नान के बाद। रक्तारविन्दे—लाल कमलों से। अध्ययनमुखरवटुजनम्—पढ़ने से लाचार हुए ब्रह्मचारियों के समूह वाले। उपचर्यमनितिथिवर्गम्—अतिथियों की पूजा वाले। पूज्यमान पितृदेवतम् पितरों तथा देवताओं की पूजा वाले। अर्च्यमानहरिहरपितामहम् जिसमें विष्णु शिवजी तथा ब्रह्मा की पूजा हो रही है। व्याख्यायमानयज्ञविधिम्—जहाँ यज्ञ विद्या का उपाख्यान हो रहा है। पठ्यमानविविधपुस्तकम् जहाँ पर अनेक पुस्तकें पढ़ी जा रहीं है। विचार्यमानसकल शास्त्रार्थ—जहाँ पर सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ पर विचार किया जा रहा हैं। अतिरमणीयम् अत्यन्त मनोहर अपश्यम् देखा।

सन्दर्भ तोते ने कहा कि मेरी दशा देखकर हारीत एक ऋषि बालक के द्वारा मुझे तालाब के पास ले गया।

भावार्थ जल के पास जाकर तथा स्वयं लेकर मुझे अंगुली से कुछ जल पिलाया। इसके बाद कमलिनी के पत्ते की जल से ठण्डी छाया में मुझे रखकर

स्नान किया। स्नान करने के बाद अनेक प्राणायामों से पवित्र होकर तथा लाल कमली से युक्त सूर्य को अर्घ देकर उठ गया। इसके बाद सम्पूर्ण मुनि बालकों के समूहों के पीछे आते हुए वह मुझे लेकर आश्रम की ओर धीरे धीरे चल दिया, विद्यार्थी जिसमें कुछ दूर जाकर ही अध्ययन करने में वाचाल हो रहे हैं जहां पर अतिथियों की सेवा हो रही है जहां पर पितरों तथा देवताओं की पूजा हो रही है, जहाँ विष्णु, शिव, ब्रह्मा का पूजन हो रहा है, जहाँ पर यज्ञ विद्या का व्याख्यान हो रहा है, जहाँ अनेक प्रकार की पुस्तकें पढ़ी जा रही हैं, जहां सम्पूर्ण शास्त्रों के अर्थ पर विचार हो रहा है, जहां पर्णकुटियों की रचना प्रारम्भ हो रही है, जहाँ चबूतरे लीपे जा रहे हैं, जहाँ ध्यान लगाया जा रहा है, जहां पर मन्त्र सिद्ध किये जा रहे हैं, जहाँ योग का अध्ययन किया जा रहा है, जहां वल्कल वस्त्र धोये जा रहे हैं, जहां लकड़ियाँ इकट्ठी की जा रही हैं जहाँ रुद्राक्ष की माला गूंथी जा रही हैं, जहाँ पर धान्य विशेष इकट्ठा किया जा रहा है, जहां कमण्डल भरे जा रहे हैं, ऐसे अति सुन्दर दूसरे ब्रह्मलोक के समान आश्रम को देखा।

समास अनेकप्राणायामपूत:—अनेः ये प्रणायाम तैः पूतः अनेक प्रणायामपूत (तृतीया तत्पुरुष)। अध्यनमुखरवटुजनम् अध्ययनेमुखराः वटुजनाः यस्मिन् तम् अध्ययनमुखवटुजनम् (बहुव्रीहि)। उपचर्यमाणातिथिवर्गम् उपचर्यमाणः अतिथिवर्गो यस्मिन् सः तम् (बहुव्रीहि)। पूज्यमानपितृदेवतम् — पूज्यमानानि पितृदैवतानि यस्मिन् तम् (बहुव्रीहि)। अर्च्यमानहरिहरपितामहम् हरिश्च हरश्च पितामहश्च इति हरिहरपितामह (द्वन्द्व)। अर्च्यमानाः हरिहरपितामहः यस्मिन तम् अर्च्यमानहरिहरपितामहम् (बहुव्रीहि)। विचार्यमाणसकलशास्त्रार्थम् विचार्यमाणः सकल शास्त्रार्थो यस्मिन् तम् विचार्यमाणसकलशास्त्रार्थम् (बहुव्रीहि)। आरभ्यमाणाः पर्णशाला यस्मिन् तम् आरम्भामाणापर्णशालम् (बहुव्रीहि)। आवध्यमानध्यानम् आवध्यमानम् ध्यानम् यस्मिन् तम् अवध्यमानध्यानम् (बहुव्रीहि) गृह्यमाणः त्रिपुन्डकः यस्मिन् तम् गृह्यमाणत्रिपुण्डकम् (बहुव्रीहि)। आपूर्यमाणकमण्डलुम्—आपूर्यमाणानि कमण्डलूनि यस्मिन् तम् आपूर्यमाण कमण्डलुम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २२ (२०) यत्र च ······ ··········अपश्यम् ।

शब्दार्थ — मलिनता मालिन्य । हविर्धूमेषु – आहूतियों के धुयें में । कुशाग्रेषु — कुशाग्रों के अग्रभाग में । कदलीदलेषु केले के पत्तों से । रुद्राक्षवलयेषु रुद्राक्ष की मालाओं में । रक्ताशोकतरी—रक्त अशोक वृक्ष की । समान्तात्— चारों ओर से । धवलीकृतविग्रहम् — श्वेत किये गये शरीर वाले । अंसालम्बित धवलयज्ञोपवीतम् कन्धे पर लटकते हुए श्वेत यज्ञोपवीत । दुकूलवल्कलेन — वल्कल वस्त्रों से । सञ्छादितम्—ढके हुए ।

सन्दर्भ—हारीत स्नान करने के बाद मुझे तपोवन की ओर लेकर चला । मैंने दूर से ही जहां पर देव पूजन तथा अतिथिपूजन हो रहा है । दूसरे ब्रह्मलोक के समान आश्रम को देखा ।

भावार्थ — उस आश्रम में मनुष्यों के आचार में मलीनता नहीं थी बल्कि यज्ञ में ही कालापन था मनुष्यों के स्वभाव में तीक्ष्णता नहीं थी बल्कि कुशाग्रों के अग्रभाग में तेजी थी हवा चलने से केले के पत्ते हिलते थे, मनुष्य का मन चञ्चल नहीं था जाप करते समय रुद्राक्ष की मालाओं की गिनती होती थी । मनुष्य के शरीर की गिनती नहीं होती थी, सबसे समान व्यवहार होता था, ऐसे आश्रम के बीच में रक्त अशोक वृक्ष की छाया के नीचे बैठे हुए, चारों ओर से महर्षियों से घिरे हुए बुढ़ापे के कारण श्वेत बालों के होने से श्वेत शरीर वाले, जटाओं से सुशोभित कन्धे पर लटकते हुए, श्वेत यज्ञोपवीत वाले वल्कल वस्त्रों को पहने हुए भगवान जाबालि को देखा ।

समास —कदलीदलेषु कदलीनां दलानि कदलीदलानि तेषु कदलीदलेषु (षष्ठी तत्पुरुष) । असालम्बितधवलयज्ञोपवीतम् अंसे आलम्बते धवलयज्ञोपवीतमयस्य स तम् असाल्मम्बितधवलयज्ञोपवीनम् (बहुव्रीहि) ।

पृष्ठ २२–२३ (२१) अनवलोक्य··················न भीता ।

शब्दार्थ—प्रभानस्तपसाम् तपस्या का महात्मय । परिस्फुरन्ति चमकती हुई । सौदामिनीव—बिजली की भांति । चक्षुषः — आंखों के । प्रतनुतपसाम् – स्वल्प तपस्या । प्रकृत्या स्वभाव से । किमुत क्या आश्चर्य है । सकलभवन पूजित चरणानाम् सम्पूर्ण जगत से पूजित चरणों वाले । अघक्षयकारिणम्—

पापों को नष्ट करने वाले। नामग्रहणानि · नाम लेना। पुण्यभाजः—पुण्य का भोग करने वाले। अहर्निशम्—दिन रात। महासत्त्वा अत्यन्त शक्तिशाली।

सन्दर्भ रक्त अशोक वृक्ष की छाया में बैठे हुए मुनियों से घिरे हुए जब जाबालि मुनि को मैंने देखा।

भावार्थ—उनको देखकर मैंने विचारा कि तपस्या का प्रभाव भी आश्चर्य-जनक है। इसकी यह मूर्ति शान्त होते हुए भी बिजली की तरह चमकती हुई नेत्रों के तेज को नष्ट कर रही है। निरन्तर उदासीन होते हुए भी उग्र प्रताप के कारण प्रथम आये हुओं को भय सा उत्पन्न करती है। थोड़ी तपस्या वाले तपस्वियों का तेज भी स्वभाव से असहनीय होता है फिर सम्पूर्ण संसार के पूजित चरणों वाले तथा पापों को नष्ट करने वाले ऐसे महात्माओं का क्या कहना। जब महामुनियों के नाम लेने मात्र से ही पुण्य प्राप्त हो जाता है फिर दर्शनों का तो क्या कहना। जहाँ जाबालि जैसे महर्षि हैं वह आश्रम भी धन्य है अथवा इससे अधिष्ठित यह सम्पूर्ण जगत ही धन्य है निश्चय ही ये मुनि लोग भी पुण्य का भोग करने वाले हैं जो पवित्र कथा सुनाते हुए नित्य प्रति उनकी पूजा करते हैं, सरस्वती भी धन्य है, जो निरन्तर इनके मानस में मराली की भांति निवास करता है। इसको प्राप्त करके सब विद्यायें प्रसन्न हैं। निश्चय ही इसके धर्म के सत्युग का धर्माचरण विशिष्ट नहीं होता। निश्चय ही आकाश भी अब सप्तर्षि मण्डल के निवास का अभिमान नहीं करता। आश्चर्य है कि वृद्धावस्था बड़ी शक्तिशाली है जो इस जटा भार पर गिरती हुई भी नहीं डरी।

समास सप्तर्षि मण्डल निवासाभिमानम्—सप्तर्षिणां मण्डले निवासः (षष्ठी तत्पुरुष)। तेन योऽभिमानः तम् सप्तर्षिमण्डल निवासाभिमानम् (तृतीया तत्पुरुष)।

पृष्ठ २३–२४ (२२) भगवत ······ ······ सचेतनाः प्रणिमः।

शब्दार्थ प्रभावात् महात्मय से। भीतमिव—डरे हुए की भांति। रविकिरणजालम् सूर्य की किरणों का समूह। दूरतः – दूर से। परिहरितः छोड़ता है। मन्दमन्दसंचारी—धीरे धीरे चलने वाली। सशङ्क इव शङ्कित की भांति। उपसर्पंति · जाती हैं। गन्धवाहः—हवा। सन्तरणसमु—उतरने का

पुल । सन्तोषामृतस्य—संसार रूपी समुद्र का । बड़वानल—पानी की अग्नि । लोभार्णवस्य—लोभ के समुद्र को । दावानलः—वन्य अग्नि । रागपल्लवस्य—इच्छा रूपी पत्ते की । क्रोधभुजगस्य—क्रोध रूप सर्प का । मत्सर—दूसरों के गुणोत्कर्ष को सहन न करना । शाश्वतिकम्—निरन्तर चलते हुए । तिर्यञ्चोऽपि—पक्षी भी । शिखिनःकलापम्—मोर की पूंछ में । कुरङ्ग शावक—हरिण का बच्चा । द्विरदकलभैः—हाथी के बच्चों से । आकृष्यमाणाम्—खींचे गये । जटाभारम्—बालों को । बहुमन्यते—सुख मानता है । कपिकुलम्—बन्दरों का समूह असगतचापलम्—चञ्चलता छोड़े हुए । उपनयति—ले जाता है । मदान्धा—मदोमत्त । करिण—हाथी । निश्चेता—अचेतन ।

सन्दर्भ—तोता कहता है कि जाबालि मुनि के प्रभाव से उस तपोवन में शेर और बकरी एक घाट पानी पीते हैं ।

भावार्थ—महर्षि जाबालि के प्रभाव से सूर्य की किरणे डरे हुए की भांति दूर से ही तपोवन को छोड़ देती हैं । यह धीरे धीरे चलने वाली हवा शक्ति की भांति इसके पास जाती है । इस महात्मा के अधिष्ठित संसार दो सूर्य वाले की भांति शोभा को प्राप्त कर रहा है, यह करुणा रस का प्रवाह है, संसार रूपी समुद्र से पार होने का पुल है, सन्तोष रूपी अमृत रस का प्रवाह है, मोक्ष पदवी का उपदेशक है, लिप्सा रूपी समुद्र का बड़वानल है, इच्छा रूपी पत्तों के लिए यह दावानल है, क्रोध रूपी सर्प को वश में करने का मन्त्र है, अच्छे मार्ग का उपदेश करने वाला है, सज्जनता का उत्पत्ति स्थान है, कलियुग का शत्रु है, तपस्या का खजाना है, सत्य का मित्र है, विपत्ति का शत्रु है, इसके प्रभाव से ही तपोवन वैर तथा मत्सर रहित है, महात्मा के प्रभाव का बड़ा आश्चर्य है, क्योंकि यहाँ पर पशु पक्षी अपने शाश्वतिक वैर को छोड़कर तपोवन के निवास का सुख अनुभव करते हैं । गर्मी से पीड़ित सर्प मोर बजाओं में निराश होकर घुसता है । यह हरिण का बच्चा अपनी माता को छोड़कर सिंहनी के स्तनों का दूध पीता है । हाथी के बच्चों से खींचे गये अपने बालों को शेर का सुख अनुभव करता है । यह बन्दरों का समूह चञ्चलता छोड़कर स्नान किये हुए मुनि बालकों के पास में फूल ले जाता है । मदोन्मत्त होते हुए भी दया युक्त हाथी

भ्रमरों का समूह को नहीं हटाता । जब इस मुनि के दास अचेतन वृक्ष भी नियम में चलते हुए प्रतीत होते हैं फिर सचेतन प्राणियों का तो क्या कहना ।

समास रविकिरणवालम् रविकिरणानोजालम् रविकिरणांवलम् (षष्ठी तत्पुरुष) ! मन्दमन्द सन्चारी मन्द मन्द संचरत इति मन्दमम दसञ्चरी (उपपद समास) । उपगांतवैरम्—उपशात वैर यस्मिन् तत् उपशातवैरम् (बहुव्रीहि) । अपगतमत्वम्—अपगतो मत्सरो यस्मिन् तम् अपगतमत्सरम् (बहुव्रीहि) । अपगागतचापलम् अपगतम् चापल यस्य तत् अपगनच पलम् (बहुव्रीहि) । मधुकरकुलानि—मधुरकराणां कुलानि मधुकरकुलानि (षष्ठी तत्पुरुष) ।

पृष्ठ २४ (२३) इत्येवम् .... — स्थास्यति ।

शब्दार्थ चिन्तयन्मेव—विचार करते हुए । स्थापयित्वा रखकर । उपगृह्य—पकड़कर । कृताभिवादनः—जिसने प्रणाम कर लिया है । अनतिसमीपवर्तिनि —दूर के । समुपाविशत् —बैठ गया । आसादितः - —प्राप्त किया है । सल्पाववेषायुः—-जिसकी आयु थोड़ी ही शेष है । दुरारोहतया – –कठिनता से चढ़ने योग्य होने से । स्वनीडमारोपितुम्—घोंसले में रखना । उत्पतितुम्—उड़ने में । आश्रमतरुकोटरे – –आश्रम के वृक्ष की खोखर में । उपनीतेन - लाये हुए । सवर्ध्यमानः—वृद्धि को प्राप्त होता हुआ । अनाथपरिपलर—अनाथों का पालन करना । अस्मद्विधानाम्——हम जैसों का, हमारा । उदभिन्नपक्षति पर निकल जाने पर । गगनतलसंचारणसमर्थ आकाश में उड़ने में समर्थ ।

सन्दर्भ—तोता कहता है कि जब मैं जाबालि मुनि के आश्रम को देखकर आश्चर्यचकित हो रहा था उसी समय हारीत ने मुझे रक्त शोक वृक्ष की छाया में रख दिया ।

भावार्थ— इस प्रकार विचार करते हुए मुझे उसी रक्त अशोक वृक्ष की छाया में रखकर पिता के चरणों में झुककर प्रणाम कर लेने पर हारीत पिता से कुछ दूर रखे हुए कुशासन पर बैठ गया । मुझे देखकर मुनि लोग बैठे हुए हारीत को पूछने लगे कि यह तोते का बच्चा कहाँ से प्राप्त किया ? हारीत ने उनको बताया कि स्नान करने को जाते हुए मैंने मरणावस्था को प्राप्त यह तोते

इसको घोंसले में न रख सका अतः दया से ले आया हूँ। जब तक आकाश में नहीं उड़ सकता तब तक यहीं किसी आश्रम के वृक्ष की खोखर में मुनि बालकों ने तथा हमारे द्वारा लाये गये अनेक प्रकार के फलों के रस से वृद्धि को प्राप्त होता हुआ जीवन धारण करे। अनाथों का पालन करना ही तो हमारा धर्म है पर निकल आने पर आकाश में घूमने में समर्थ जायेगा फिर जहाँ इसकी इच्छा होगी वहाँ जायेगा अथवा परिचय हो जाने पर यहीं रहेगा।

समास कृताभिवादनः कृतअभिवादनं येन असौ कृताभिवादनः (बहुव्रीहि) अल्पावशेषायुः—अल्प अवशेष आयुर्यस्य सः अल्पावशेषायुः (बहुव्रीहि)। तपस्विदुरारोहतया तपस्विभिः दुरारोहतया तपस्विदुरारोहतया (तृतीया तत्पुरुष)। उद्भिन्नपक्षति—उद्भिन्न पक्षतिः। यस्य सः उद्भिन्नपक्षतिः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २४–२५ (२४) इत्येवमादिम्……………भगवान प्रभातः।

शब्दार्थ अस्मद् सवद्धम् —मेरे से सम्बन्ध रखने वाला। किञ्चदुपजात कुतुहलम्— —कुछ आश्चर्यान्वित होते हुए। अतिप्रशान्तदृष्ट्या —प्रसन्नता से। सुचिरम्—बहुत समय तक। अभिज्ञानम् भूली हुई वस्तु का याद आना। पुनः पुनर्विलोक्य—बार बार देखकर। आवनयस्य अशिष्टाचार का। अनुभूयते अनुभव कर रहा है। कालत्रयदर्शी भूत, भविष्यत, वर्तमान काल की बात को जानने वाले। करतलगतम् —हाथ पर रखे हुए। आगमिनम् —आ। वाले। ईक्षणगोचरतातामू —आँखों के सामने आते हुए। आयुप संख्या— आयु की गिनती। आनंदयसि —बता देते है। तापस परिषद—तपस्वियों की सभा। विदित तत्प्रभाव— —उसके प्रभाव को जानने वाले। कीदृशः कैसा। किमर्थम् —किसलिए। असकृत—अनेक बार। उपयाचितवती—प्रार्थना की। अपनयतु —दूर करो। विहगजातौ—पक्षी जाति में। प्रभवः/ उत्पत्ति स्थान। नः हमारा।

सन्दर्भ तोता कहता है कि जब मुनियों ने उससे मेरे विषय में पूछा जब हारीत मेरे विषय में मुनियों को बता रहा था उसी समय जाबालि मुनि ने मेरी ओर देखा और कहा।

भावार्थ—उस समय तत्सम्बन्धी आलाप को सुनकर कुछ आश्चर्यान्वित हुए भगवान् जाबालि ने अत्यन्त प्रसन्न दृष्टि से बहुत देर तक मुझे देखकर भूली हुई बात का ज्ञान होने वाले की भांति बार बार देखकर कहा कि यह तो अपने ही अशिष्टाचरण का ही फल भोग रहा है। भगवान् जाबालि तीनों कालों की वृत्त को जानने वाले हैं। तप के प्रभाव से दिव्य नेत्रों से सम्पूर्ण संसार को हाथ पर आई वस्तु की भांति देखते हैं, दूसरे जन्म में बीती बातों को जानते हैं आगे होने वाला समाचार कह देते हैं, सामने आये हुए प्राणियों की आयु की संख्या भी बता देते हैं। उनके प्रभाव को जानने वाली सम्पूर्ण मुनियों की सभा यह सुनकर आश्चर्यान्वित हो गई तथा कहने लगे कि इसने कैसा अशिष्टाचार किया, क्यों किया ? क्या किया ? पहले जन्म में यह कौन था ? इस प्रकार अनेक बार उन्होंने जाबालि से प्रार्थना की कि आप हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाइये तथा यह बताइयेगा वह किस अशिष्टाचार का फल भोग रहा है। पक्षी जाति में यह कैसे उत्पन्न हुआ इसका क्या नाम है आप हमारे आश्चर्य को दूर कीजिये क्यों कि आप सब आश्चर्यों के उत्पत्ति स्थान है।

समास—उपजात कुतुहलः उपजात कुतुहल यस्य सः उपजात कुतुहलः (बहुव्रीहि)। उपजातप्रत्यभिज्ञानः—उपजात प्रत्यभिज्ञानम् यस्य सः उपजातप्रत्यभिज्ञानः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २५ (२५) इत्यवम्.........................अकरोत्।

शब्दार्थ उपयाचितः——प्रार्थना किये गये। तपोधनपरिषदा——तपस्वियों की सभा से। अतिक्रामति – बीत रही है। देवार्चनवेला—देव पूजन का समय। अपराह्णसमये—दोपहर का समय। आदितः प्रभृति—प्रारम्भ से लेकर। सम्भृति—उत्पत्ति। अपगत क्लमः—थकावट का दूर होना। जन्मान्तरोदन्तम् पहले जन्म का समाचार। स्वप्नोपलब्धमिव—स्वप्न की भांति। मयि कथयति मेरे कहने पर। अभिदधत्—कहते हुए। उत्थाय—उठकर।

सन्दर्भ—जब ऋषि परिषद ने जाबालि मुनि से उसके पहले जन्म के वृत्तांत को पूछा तब उन्होंने कहा।

भावार्थ—मुनि परिषद के इस प्रकार प्रार्थना करने पर महामुनि ने कहा कि यह बहुत बड़ा आश्चर्य है दिन अब थोड़ा ही शेष है स्नान के समय में विलम्ब हो रहा है, अतः आपका भी देव पूजन समय व्यतीत हो रहा है, इस लिए आप लोग उठो और यथोचित दिवस व्यापार स्ननादि किया करो, फिर फल आदि के साथ दिग्विजय के लिए चल पड़े। मार्ग में एक वार एकांकी मूल का भोजन कर लेने पर आपके सम्मुख दोपहर वाद सब प्रारम्भ से सुनाऊंगा। यह जो है, पहला जन्म इसने जो किया, किस प्रकार इस लोक में इसका जन्म हुआ। जब तक आप लोग इसको भोजन द्वारा थकावट रहित कर दो। निश्चय ही यह भी मेरे कहने पर अपने पहले जन्म के सब समाचार को स्वप्न में प्राप्त की भांति याद करेगा। इस प्रकार कहते ही जाबालि मुनि ने उठकर मुनियों के साथ दिन का उचित व्यापार स्नानादि क्रिया की।

समास—कृतसलसूलाशन नाम—कृत फलमूलयारशन ये ते कृतफलमूलाशनाः तेषां कृतफलमूलाशनानाम् (बहुव्रीहि)। अपगतक्लमः अपगतः क्लमो यस्य सः अपगतक्लमः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २५–२६ (२६) अनेन········ ········कौतूहलम्।

शब्दार्थ—परिणतः—बदल गया। विरलातरः—थोड़े प्रकाश वाला। तपिमानम् अल्पता का। अभवत् हो गया। पारावतपादपटलराग—कबूतर के पैरों के समान श्वेत रक्त वर्ण का। अवलम्बतः—लटक रहा था। अस्तमुपगते—अस्त हो जाने पर। सहस्रदीधितेः—सूर्य के। विद्रुमलतेव मूंगे की लता के समान। आवध्यमानध्यानम् ध्यान लगा रखा है जिसमें। अभृतदीधितः—चन्द्रमा। ज्योत्सना—चांदनी। चन्द्रपाद—चन्द्रमा की किरणों से। अगाहयन्त विलोकित किये गये। दूरोदित—दूर उदय होने पर। प्रवहत्सु—चलते हुए। कृतहार—भोजन कर लेने पर। पतत्रिपोतः—पक्षी का बच्चा।

सन्दर्भ—मुनि ने कहा कि दिन थोड़ा शेष रह गया है। अब जाकर आप स्नान आदि किया करें। दोपहर बाद आप लोगों को इसकी कथा सुनाऊंगा।

भावार्थ इस समय ने दिन को बदल दिया। दिन थोड़े प्रकाश वाला रह

गया कबुतर ने पैरों के रंग के समान श्वेत रक्त वर्णों का सूर्य आकाश पर ढलने लगा। सूर्य के छिप जाने पर मूंग की बेल के समान श्वेत रक्त वर्ण की दिखाई देने लगी। जिससे ध्यान हुए मुनियों वाला आश्रम हो गया। अर्थात् सन्ध्या समय आश्रम के सब ऋषि मुनि ध्यान लगाकर बैठ गये। उसके बाद क्रमशः आकाश में चन्द्रमा निकल आया। पृथ्वी पर हंस के समान श्वेत चाँदनी पड़ने लगी। चन्द्रमा की किरणों ने कमल के तालाबों का विलोकन कर दिया। धीरे धीरे चन्द्रमा के दूर निकलने पर तथा प्रदोष कालीन हवा के चलते हुए हारीत भोजन किये हुए मुझको लेकर, सब मुनियों के पास जाकर जालपाद नाम के शिष्य ने धीरे धीरे पंखा झलते हुए वेत्रासन पर बैठे हुए पिता को कहा कि पिताजी यह सम्पूर्ण तपस्वियों की सभा मण्डल बनाये हुए प्रतीक्षा कर रही है कि इस पक्षी के बच्चे की थकावट दूर कर दी गई है अतः आप बताइये कि इसने पहले जन्म में क्या किया? वह कौन था और कौन होगा? इस प्रकार से कहने पर जाबालि ने आगे रक्खे हुए मुझे देखकर तथा उन सब मुनियों को तैयार हुए देखकर धीरे धीरे कहा कि यदि आप लोगों को आश्चर्य होता है तो सुनो—

समास—पारावतपादपाटलरागः पारावतस्य पादौ परावतपादौ तद्वत् पाटली-पारावत पादपाटले परावतदलपाटली रागो यस्मात् सः पारावतपादपाटलरागः (बहुव्रीहि) आबद्धमानध्यानम् आबद्धमानम् ध्यानं यस्मिन् तत् आबद्धमानध्यान (बहुव्रीहि) कृताहारम् कृतः आहार येन सः तम् कृताहारम् (बहुव्रीहि) व्यपनीतश्रम व्यपनीतः श्रमः यस्य सः व्यपनीतश्रमः (बहुव्रीहि)।

(ख) कथामुखम्

पृष्ठ २६ (२७) अस्ति सकल.................. पृथिव्यामासीत्।

शब्दार्थ सकलत्रिभुवनललामभूता सम्पूर्ण त्रिभुवन (तीनों लोक) में सुन्दर। प्रसवभूमिरिव जन्मभूमि की तरह। कृतयुगस्य स्वर्ग का। परिखा-वलयेन—नगर के चारों ओर खुदी हुई खाई ने। परिवृता घिरी हुई। हिमगिरि-

[illegible] पर्वत की शोभा की भाँति [illegible]

अधिक सुन्दर। इन्द्रनीलमणिगवाक्षविवरेषु—इन्द्रनील मणियों से बने हुए झरोखे में। विराजन्ते—शोभित होती है। रविगभस्तय—सूर्य की किरणें। प्रतिमाच्छलेन—परछाई के बहाने से। लुठति—लेटता है। मणिकुट्टिमेषु—मणियों के समूह में। उत्सृष्ट कैलासवासप्रीति—कैलाश पर्वत पर निवास में प्रेम न करने वाला। महाकालाभिधः महाकाल नाम वाला, शङ्कर। नलनहुषययातिप्रतिमः—राजा नल, नहुष तथा ययाति के समान। भुजबलजितमण्डलः—अपनी ही भुजाओं की शक्ति से भू मण्डल को जीत लेने वाला। अधीतधर्मशास्त्रः—धर्म शास्त्र पढ़ा हुआ। ग्रहगण इव—सोम, मङ्गल आदि ग्रहों के समूह की तरह। बुधानुगतः—ग्रहपक्ष में, बुध नाम के नक्षत्र का अनुसरण करने वाला, राजा के पक्ष में विद्वानों का अनुसरण करने वाला। सुमित्रोपेतः—दशरथ के पक्ष में सुमित्रा नाम की रानी वाला तारापीड के पक्ष में श्रेष्ठ मित्रों वाला पुरुषोत्तमस्य—भगवान विष्णु का। परिहृतप्रजापीडः—प्रजा की पीड़ा को दूर कर देने वाला। अमस्त—माना, समझा। भरेण—भार से, सम्मान से। सुरपतिः इन्द्र। स्पृहयाञ्चकार—स्पर्धा करता था, ईर्ष्या करता था। निर्जगाम्—निकला जजाप जपता था। अवनति—झुक जाना। निग्रहः दमन। अमलिनान्तरत्वं स्वच्छ प्रकाश होना।

सन्दर्भ—जाबालि मुनि ने बताया कि यह अपने कर्मों का ही फल भोग रहा है। यह सुनकर सब तपस्वी तोते के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनने के लिए उत्सुक हो गये। तब जाबालि मुनि ने तोते के पूर्व जन्म का वृत्तान्त को सुनाना आरम्भ किया।

भावार्थ—जाबालि ने कहा कि तीनों लोकों में सबसे सुन्दर, सतयुग की जन्मभूमि के समान चारों ओर से परिखा (खाई) से घिरी हुई विलासी लोगों से अधिष्ठित, सौन्दर्य से स्वर्ग की कांति को भी छीन लेने वाली अवन्ति देश में उज्जयिनी नाम की नगरी है जो प्रतिदिन इन्द्रनील मणियों से बने हुए झरोखों में सूर्य की किरणों से शोभित होते हैं। इसके प्रत्येक रत्न मणियों के समूह में परछाई के बहाने चन्द्रमा लेटता है अधिक क्या कहें कि जिसमें त्रिपासुर राक्षस

को भस्म करके उसकी राख का अङ्गराग (पाउडर) मलने वाले, महाकाल नाम

से प्रसिद्ध स्वयं शङ्कर भगवान कैलाश पर्वत के निवास से प्रेम छोड़कर निवास करते हैं। इस प्रकार की उस नगरी में राजा नल, नहुष और याति के समान, अपनी भुजाओं के बल से सम्पूर्ण भूमण्डल को जीत ले जाने वाला, बुद्धिमान, उत्साही, धर्म शास्त्रों को अध्ययन किया हुआ जिस प्रकार सोम, मङ्गल आदि ग्रह सदा बुद्ध ग्रह के पीछे चलते हैं ठीक इसी प्रकार विद्वानों का सदा अनुसरण करने वाला जिस प्रकार राजा दशरथ सुमित्रा नाम की रानी से युक्त थे, ठीक उसी प्रकार श्रेष्ट मित्रों वाला धर्म के अवतार के ही समान मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान विष्णु (राम के प्रतिनिधि) के समान तथा अपनी सम्पूर्ण प्रजा की पीड़ा को हरण कर देने वाला तारापीड नाम का राजा था जिसको सौन्दर्य में लोग कामदेव समझते थे तथा जिसने कलियुग के द्वारा चञ्चल किये हुए धर्म को फिर से स्थिर कर दिया था। जिसके सिंहासन पर बैठ जाने पर सब दिशायें सम्मान से झुक गई। जिससे मानों इन्द्र भी ईर्ष्या करता था। जिसने सम्पूर्ण लोक के हृदयो को आनन्द देने वाले गुणों का समूह प्रकट हुआ। जिसके छत्र की छाया को लक्ष्मी ने क्षण भर के लिए भी नहीं छोड़ा तथा जिसके चरित्र को लोग मन्त्र की तरह जपते थे और जिस राजा के होते हुए पृथ्वी पर धनुषों का झुकना (शत्रुओं के द्वारा पराजय स्वीकार करना) वर्षाकाल में भी आकाश का स्वच्छ होना तथा इन्द्रियों का दमन होता था।

समास—नलश्च, नहूश्च ययातिश्चेति नलनहुषययातयः (द्वन्द्व)। ते एव प्रतिभा यस्य स इति नलनहुषययातिप्रतिम् (बहुव्रीहि)। प्रजानां पीडेत प्रजापीडा (षष्ठी तत्पुरुष)। अपहृता प्रजापीडा येनासौ आहृप्रजापीड़ (बहुव्रीहि)। सकलश्चासो लोक इति सकल लोकः (कर्मधारय)। सकल लोकस्य हृदयानि इति सकललोकहृदयानि (षष्ठी तत्पुरुष)। तेषु आनन्द करोति इति सकललोकहृदय नन्दकारी (उपपद समास)।

पृष्ठ २७–२८ (२८) शब्दार्थ——राज्ञः——राजा था। नीतिशास्त्र प्रयोग कुशलः——राजनीति के प्रयोग करने में चतुर। अविषण्णोः—स्थिर बुद्धि वाला। धाम——घर। अप्रतिहमति——जिसकी बुद्धि न रुके, उपाय सोच लेने वाला। अमात्यः——मन्त्री ... ——भुजाओं के बल से। वसुन्धराम्——पृथ्वी को।

विजित्य —जीतकर, सीतकर। सुस्थिता:—सुव्यवस्थित। अनुवभूव—अनुभव करता था। अनायासेनव किसी विशेष यत्न के बिना ही प्रज्ञाबलेन——बुद्धि के बल से। बभार——धारण कर लिया था, पालन पोषण करना था। मन्त्रीनिवेशितराज्यभारस्य——मन्त्री के ऊपर ही राज्य भार सौंप देने वाला। सुतमुखदर्शनसुखम्——पुत्र का मुंह देखने का मुख, पुत्र प्राप्ति। न लभे—नहीं पाया। यथा यथा——जैसे जैसे। योवनमतिचक्राम यौवन वीतता गया। तथा तथा वैसे वैसे। अवर्धत बढ़ता गया। सन्ताप——दुख। चक्षुष्मातम् आंखों वाला। अमन्यत——मानता था, समझता था। वेला—लहरें। पादपस्य—वृक्ष की। सकलान्त:पुर प्रधानभूता सम्पूर्ण अंत:पुर में प्रधान, मुख्य महिषी——पटरानी। यदावासगत:——उसके हल में गया हुआ। अलंकृताम्— श्रृङ्गार न की हुई। रुदतीम् रोते हुए। ददर्श – देखा। भूपाल राजा ने। अवादीत——कहा। अशब्दम्——बिना शब्द किये, अन्दर ही अन्दर। प्रसीद— प्रसन्न हो। निवेदन——कहो। किन्चय —क्या। मतापराद्धम्——मैंने अपराध किया है। अस्मदनुजीविना —हमारे अधीन रहने वाले ने। परिजनेन—सेवक ने। अतिनिपुणमपि अत्यन्त ध्यान से भी। चिन्तयन्—सोचता हुआ। स्वलितं —दोष अपराध, गलतीं। स्वविषये—तेरे विषय में। स्वदात्तम्—मेरे आधीन। कथ्यताम् बताओ। शुच:—शोक का। अभिधीयमाना—कही हुई। प्रतिवच: — उत्तर। प्रतिददे—दिया। अाश्रुहेतुम्—आंसुओं (रोने) का कारण। अपृच्छत् — पूछा।

सन्दर्भ—जाबालि मुनि ने अपने शिष्यों को तोते के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाते हुए बताया कि उज्जयिनी नाम की नगरी में तारापीड़ नाम का अति प्रतापी राजा हुआ था। इससे आगे उन्होंने सुनाना आरम्भ किया।

अर्थ उस राजा को राजनीति के प्रयोग करने में अति चतुर तथा बड़े २ कार्य सङ्कटों में भी स्थिर बुद्धि वाला, धैर्य का घर गुणों का गुरू दशरथ का वशिष्ठ के समान, राम का विश्वामित्र के समान, सम्पूर्ण कार्य में न रुकने वाली बुद्धि वाला शुकनास नाम का ब्राह्मण मन्त्री था। उस राजा ने अपने भुजबल से सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतकर राज्य का सारा भार उस शुकनास नाम

के [illegible] अब यौवन के (जवानी) के आनन्द को भोग रहा था। शुकनास ने अपने बुद्धि बल से उसे विशाल राज्य को बिना किसी विशेष प्रयास के ही सम्भाल लिया। इस तरह मन्त्री पर राज्य भार सौंप देने वाले उस राजा का यौवन सुख भोगते हुए समय बीतने लगा। एक बार भी उसे पुत्र का मुख देखने का सुख प्राप्त नहीं हुआ। जैसे जैसे यौवन (जवानी) बीतता गया वैसे ही वैसे विफल मनोरथ इस राजा का खेद भी बढ़ता गया। आँखों वाला होते हुए भी वह अपने आपको एक अंधा समझता था इसके बाद सागर की लहर के समान वृक्ष की बेल के समान, चांद की चांदनी के समान सम्पूर्ण अन्तःपुर में प्रधानभूत विलासवती नाम की पटरानी थी। एक दिन जब राजा उसके महल में गया तो उसने विलासवती को बिना शृङ्गार किए (मलिन वेष में) रोती हुई देखा तब राजा ने उससे कहा देवी! चुपचाप मन ही मन क्यों रो रही हो तथा तुमने शृङ्गार क्यों नहीं किया है? प्रसन्न हो और अपने दुख का कारण बताओ। क्या मुझसे कुछ अपराध हुआ है अथवा हमारे आधीन किसी नौकर से अपराध हुआ है। अत्यन्त ध्यान से सोचने पर तुम्हारे प्रति कोई अपना दोष नहीं देख पाता हूं। देवी मेरा राज्य तथा ये जीवन तुम्हारे ही आधीन है। अतः देवी अपने शोक का कारण कहो इस प्रकार कही हुई महारानी ने जब कुछ भी उत्तर न दिया तब राजा ने उसकी दासी से रोने का कारण पूछा।

समास—नीतिशास्त्रस्य प्रयोगः इति नीति शास्त्र प्रयोगाः (षष्ठी तत्पुरुष) तेषु कुशलः इति नीतिशास्त्रप्रयोगकुशलः (सप्तमी तत्पुरुष) राजस्य भारः इति राज्यभारः (षष्ठी तत्पुरुष) मन्त्रिणि निवेशितः राज्यभारो येनासौ इति मन्त्रिनिवेशितराज्यभारस्तस्य (बहुव्रीहि)। विफलो मनोरथो यस्य स विफल मनोरथस्तस्य (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ-२८—२६ (२१) अर्थ.................. ..... निर्जगाम्।

शब्दार्थ ताम्बूलकरंकवाहिनी पान का डिब्बा लाने वाली। सतत प्रत्यासन्न—हमेशा पास रहने वाली। अर्चितुम् पूजा करने के लिए। इतः—घर से गतया गई हुई है। वाच्यमानम्—पढ़ते हुए। श्रुतम्—सुना है। अपुत्राणाम्—जिनके पुत्र नहीं हैं। पुमांस—मनुष्यों को। नरकात्—नरक से। प्रागल्भ्य

—आदर। परिजनेन —साथ वालों के। अभ्यर्थमानापि——प्रार्थना करने पर भी। अभिनन्दति— इच्छा करती है। परिग्रहम् —स्वीकार करना। प्रतिपद्यते देती है। विराम —चुप हो गई। विरतवचनायाम् —कहना बन्द कर देने पर तस्याम् मकरिका के। दीर्घमुष्णम् लम्बो और गर्म। निश्वस्य — साँस लेकर निजगाद कहने लगा। क्रियाताम् - करना चाहिए, कर सकते हैं। दैवायत्ते भाग्य के वश में। अतिमात्रम्—अधिक। रुदितेन रोने से। अनुग्राह्या:—दया पात्र। अवदात कर्म——शुभ कर्म। जन्मान्तरकृतम् —पहले जन्म में किये हुए। उपनयति—प्राप्त होते हैं। अन्यथयकर्तुम् ——अनिष्ट को इष्ट करने के लिये, बुरे को अच्छा करने के लिए। उपपादयितुम् —करने को। उपपद्यताम् —करो। उपपादय— करो। दर्शितादरा——आदर प्रकट करने वाली। परम् उत्कृष्ट। देवताम् — मार्ग। आराधिता — पूजित होने पर। यथासमाहितफलानां — इच्छित फल के। दातार:—देने वाले। अमोघफला:—निश्चित बल देने वाली। दहति —जलाता है। अनल इव——आग की भांति। अनपत्यतासमुद्भवम् - सन्तान न होने से उत्पन्न हुआ। प्रतिभाति—लगता है। अप्रविधेय प्रतिकार न करने योग्य, बदला न लेने योग्य। शोकानुबन्ध—शोक की परम्परा। आधीयताम् स्थिर करो। धी —बुद्धि। धर्मपरायणानाम् ——पुण्य में तत्पर होने वालों का। समीपकारिण्य —पास रहने वाली। साश्रुलेखम्——आंसुओं से युक्त। ममार्ज— धो दिया। प्रियशतमधुराभि:—सैकड़ों प्रिय लगने वाली मीठी। वाग्भि बातों से। आश्वस्य—विश्वास दिलाकर। सुचिरम् —बहुत देर तक। स्थित्वा—खड़ा होकर।

सन्दर्भ एक बार अपनी महारानी विलासवती को रोता हुआ देख करके महाराज खिन्न हुए अपनी महारानी से शोक का कारण पूछा, जब उसने न बताया तब उसकी नौकरानी से पूछा, नौकरानी ने राजा को कहा—

भावार्थ—इसके बाद हमेशा पास में रहने वाली मकरिका नाम की ताम्बूल का डिब्बा लाने वाली नौकरानी ने राजा को कहा कि महाराज! आज चतुर्दशी है, भगवान महाकाल की पूजा करने को देवालय में गई हुई महारानी ने महाभारत पढ़ते हुए सुना है कि बिना पुत्र वाले को देवलोक की प्राप्ति नहीं हो

सकती। पितरों को नरक से जो रक्षा करता है वही पुत्र कहलाता है। यह सुनकर घर आकर पास में रहने वाले नौकरों से प्रार्थना करने पर भी भोजन की इच्छा नहीं करती, न आभुषणों को स्वीकार करती है, न कोई उत्तर देती है, केवल रोती हैं, यह सुनकर आपकी जैसी इच्छा यह कहकर चुप हो गयी। मकरिका के चुप हो जाने पर राजा थोड़ी देर चुप रहकर लम्बी और गर्म सांस लेकर बोला। भाग्यहीन वस्तुओं पर क्या कर सकते हैं। बस अधिक मत रोओ हम देवताओं के कृपापात्र नहीं हैं। हमने पहले जन्म में शुभ कर्म नहीं किया है मनुष्यों का पूर्व जन्म का किया हुआ कर्म ही इस जन्म में फल देता है। मनुष्य जन्म में जो करने योग्य है वह सब करना चाहिए। हे देवी गुरुओं में अधिक भक्ति करो। देवताओं की पूजा दुगुनी कर दो अर्थात देवताओं की पूजा दुगुनी भक्ति से करो। आदरपूर्वक ऋषियों की पूजा करो ऋषि लोग भाग्य से बढ़कर हैं वे अच्छी तरह पूजित होने पर इच्छित फल के देने वाले तथा कठिन से भी कठिन वरदान के देने वाले होते हैं अर्थात यदि वे पूजा से प्रसन्न हो जाते हैं तो इच्छित फल दे देते हैं तथा कठिन से कठिन वरदान भी दे सकते हैं। मुनिजनों की सेवा निश्चय ही फल देने वाली होती है। मुझको भी अनपत्यता जनित शोक आग की भांति नित्य प्रति जलाता रहता है मुझे सारा संसार शून्य सा दिखता है। राज्य को निष्फल सा देखता हूं। जिससे कोई बदला नहीं लिया जा सकता ऐसे भाग्य के लिए क्या किया जाये ?-इसलिए हे देवी ! इस शोक की परम्परा को छोड़ो। बुद्धि को धैर्य में तथा धर्म में स्थिर करो। कल्याण की सम्पत्तियां धर्म तत्पर पुरुषों के समीप में फिरती हैं। इस प्रकार कमण्डल लेकर स्वयं ही आंसुओं से युक्त महारानी के मुख को धो दिया। बार बार सैकड़ों प्रिय तथा मीठी वाणी के द्वारा महारानी को धैर्य देकर बहुत देर तक रुक कर राजा चल दिया।

समास—ताम्बूलस्य करङ्कम् वहति या सा ताम्बूलकरंवहनी (उपपद समास)। भूषणपरिग्रहम्—भूषणानां परिग्रह भूषण परिग्रह (षष्ठी तत्पुरुष) यथासमीहित फलानाम् यथासमीहितानि फलानि येषु एवभूतानां यथासमीफलनाम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ २९–३० (३०) निर्गते ....चकार।

शब्दार्थ—निर्गते चले जाने पर। मन्दीभूतशोका – जिसका शोक कम हो गया है। समुचितम् - योग्य। अन्वतिष्ठत – किया। ततःप्रभृति — उसी दिन से सुतराम अत्यधिक। देवतारचनेषु देवताओं की पूजा में। आदरवती आदर करने वाली। गच्छति काले—समय बीतने पर। क्षीणभूमिष्ठायां रजत्यां जब रात्रि थोड़ी शेष थी। आनने—मुख में। सकलकलापूर्णमण्डलं — सम्पूर्ण कला पूर्ण मण्डल वाले चन्द्रमा को। अद्राक्षीत् —देखा। प्रवृद्धः —जागना। समाहूय बुलाकर। असंशयम् निःसन्देह। अनुभविष्यति —अनुभव करोगे। सुतमुखकमलालोकनसुखम् पुत्र के कमल रूपी मुख को देखने का सुख। दिव्याकृतिना सुन्दर आकृति वाले। उत्सगे गोद में। निहित — रखते हुए। अवितथफला सत्य फल वाले। जनिष्यति —उत्पन्न करेगी। अभिदधानमेव करते हुए को ही। आनन्दयाञ्चकार आनन्दित किया।

भावार्थ राजा के चले जाने पर, राजा की शिक्षाओं से शोक का वेग कम होने पर विलासवती ने उचित आभूषण आदि को धारण किया। इसके बाद उसी दिन से आदरपूर्वक देवताओं की पूजा, ब्राह्मणों की सेवा तथा ऋषि जनों की पूजा करने लगी। इस प्रकार समय व्यतीत होते हुए रात्रि के अन्तिम पहर में देखे गये स्वप्न में विलासवती के मुख सम्पूर्ण कलाओं से पूर्ण मण्डल वाले चन्द्रमा को प्रवेश करते हुए देखा। सोकर उठकर उसी क्षण शुकनास मन्त्री को बुलाकर स्वप्न सुनाया। हर्ष युक्त मन्त्री ने राजा को कहा कि महाराज! बहुत दिनों में हमारी प्रजा के मनोरथ सिद्ध हुए हैं, कुछ दिनों में ही आप पुत्र के कमल रूपी मुख को देखने के सुख अनुभव करेंगे। आज मैंने भी स्वप्न में सुन्दर आकृति वाले ब्राह्मण के द्वारा देवी मनोरथ की गोद में रखे जाने वाले एक कमल को देखा है। मन्त्री को राजा ने हाथ से पकड़कर अन्दर राजमहल में प्रवेश करके दोनों स्वप्नों से विलासवती को आनन्दित किया।

समास —मन्दीभूतशोका—मन्दीभूतः शोको यस्या, सा मन्दीभूतशोका (बहुव्रीहि)। सकल कलापूर्ण मण्डलम्—सकलाः कलाः सकलाकलाः (कर्मधारय) सकलकलाभिः पूर्ण मण्डलम् ... सकलकलापूर्णं मण्डलम् (बहुव्रीहि)।

समुपजातहर्षः समुपजातः हर्षो यस्य सः समुपजातहर्षः (बहुव्रीहि)। सुतमुखकमलावलोकन सुखम् सुतस्य सुखकमलावलोकनम् (तत्पुरुष)। सुतमुखकमलावलोकनस्य यत्सुखम् तम् सुतमुखकमलावलोकनसुखम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ३०-(३१) कतिपय दिवसापगमे..........आत्मानं मेने।

शब्दार्थ—कतिदिवसापगमे—कुछ दिन व्यतीत होने पर। देवताप्रसादात्—देवताओं की कृपा से। विवेष——प्रविष्ट हुआ। प्रशस्तायाम्——सब दोष रहित होने से। वेलयाम्—समय में। सकललोकहृदयानन्दकारिणम्—सम्पूर्ण लोक के हृदय लोक को आनन्दित करने वाले। प्रसूत—उत्पन्न किया। हर्षनिर्भरः—हर्ष की अधिकता से भरा हुआ। ननृतुः—नाचने लगे। प्रशस्त—शुभ। सूतिकागृहं—जिस घर में बच्चा होता है। अवर्धत—बढ रहा था। राजसुनोर्जन्ममहोत्सवा—राजा के लड़के के जन्म का उत्सव। महापुरुषलक्षणोपेतम्——महापुरुषों के लक्षणों से युक्त। आह्लादहेतुम् आनन्द देने वाले। विगतनिमेषेण—बिना पलक झपके। पिबन्निव—पीते हुए की भाँति। स्पृहम् स्पृहा युक्त। मुमुद—प्रसन्न हुआ। कृतकृत्यम् धन्य। मेने समझा।

सन्दर्भ स्वप्न दर्शन के कुछ दिनों पश्चात् रानी ने पुत्र को जन्म दिया। उसी का वर्णन निम्न प्रकार किया गया है।

भावार्थ—कुछ दिन व्यतीत होने पर देवताओं की कृपा से विलासवती को गर्भ रहा। इसके बाद प्रसव समय पूर्ण होने पर अच्छे दिन शुभ समय में ही विलासवती ने सम्पूर्ण लोक के हृदय को आनन्द देने वाले को उत्पन्न किया पुत्र उत्पन्न होने पर सब राज्य कर्मचारी बालक तथा . . हर्ष से नाचने लगे। राजा के पुत्र का जन्म महोत्सव प्रतिदिन बढ़ने लगा। इसके बाद शुभ मुहूर्त में राजा ने शुकनास के साथ सूतिका घर में प्रवेश किया। सूतिका घर में प्रवेश करके विलासवती की गोद में महापुरुषों के चिन्हों से युक्त तथा आनन्द देने वाले पुत्र को देखा। बिना पलक झपके आँखों से पीते हुए की भाँति स्पृहा से पुत्र के मुख को देखते हुए प्रसन्न हुआ अपने को धन्य माना।

समास सकल लोक हृदयानन्द कारिणम् सकलश्चासौ लोकः सकललोकः

(कर्मधारय)। सकल लोकानां हृदयानि सकल लोक हृदयानि (षष्ठी तत्पुरुष)। सकल लोक हृदयानि सानन्द करोति इति सकल लोक हृदयानन्दकारी तम् सकल लोक हृदयानन्दकारिणम् (उपपद समास)।

पृष्ठ ३१–३२ (३२) शब्दार्थ · प्रहृष्ट वदनः—प्रमुख मुख वाला। व्यजिज्ञपत्—सूचना दी। वर्धसे —तुम्हारी वृद्धि हो। प्रतिहत—नष्ट हो। अमृत वृष्टि प्रतिमम्—अमृत वृष्टि के समान। लोकप्रवादः मनुष्यों का परम्परा से कहना। प्रियवचनानुरूपम् प्रिय वचन सुनाने वाले के योग्य। पारितोषिकम् —इनाम। आदिदेश——आज्ञा दी। द्विगुणतम्—दुगुनी। अकारयत् —कराया। ब्राह्मणसात् कृतवा——ब्राह्मणों को दान देकर। अतिचक्राम——व्यतीत हुआ। शैशवम् बाल्यावस्था।

सन्दर्भ एक पुरुष ने आकर राजा को सूचना दी कि उसके मन्त्री शुकनास के भी पुत्र उत्पन्न हुआ है।

भावार्थ · इस बीच में ही प्रसन्न मुख वाले मङ्गलक नाम के पुरुष ने राजा के चरणों में प्रणाम करके सूचना दी कि महाराज भाग्य से आपकी वृद्धि हो, तुम्हारे शत्रु का विनाश हो, तुम बहुत दिनों तक जिओ, पृथ्वी को जीतो, आप की कृपा से आपके मन्त्री शुकनास की बड़ी ब्राह्मणी ने भी पुत्र उत्पन्न किया है यह सुनकर आपकी जैसी इच्छा। इसके बाद राजा ने अमृत की वर्षा की मूर्ति के समान उसके वचनों को सुनकर कहा अहो लगातार कल्याण ही कल्याण! यह लोक प्रवाद सत्य है कि विपत्ति पर विपत्ति आती है तथा सम्पत्ति में सम्पत्ति आती है। इसके बाद प्रसन्न होकर प्रिय वचन सुनाने वाले के योग्य जो बड़े से बड़ा इनाम होता है वही इनाम उसे देने की आज्ञा दी इसके बाद गाते हुए बन्दी गण (भाटों) के साथ शुकनास के भवन पर जाकर दुगुना उत्सव कराया। दसवें दिन राजा ने करोड़ों गाय तथा सोना ब्राह्मणों को देकर स्वप्न के अनुसार ही पुत्र का नाम चन्द्रापीड रखा। दूसरे दिन शुकनास ने भी ब्राह्मणों के योग्य पुत्र का नाम वैशम्पायन रखा। क्रमशः चूड़ा कर्म आदि क्रिया करते हुए चन्द्रापीड की बाल्यावस्था हो गई।

समास—प्रहृष्टवदनः प्रहृष्टम् वदनम् यस्य सः प्रहृष्टवदनः (बहुव्रीहि)। अमृतवृष्टि प्रतिमम् अमृतस्य वृष्टि अमृतवृष्टि (षष्ठी तत्पुरुष)। अमृतवृष्टेः प्रतिभा तद्वत् अमृतवृष्टिप्रतिमम (बहुव्रीहि)। कृत चूड़ा करणादि क्रिया कला यस्य कृतः चूड़ा करणादिक्रियाकलापो यस्य सः तस्य कृतश्चडाकरणादिक्रियाकलापस्य (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ३१ (३३) ततः ·················· कौशसमलाप।

शब्दार्थ—अर्धकोशमात्रायामय—आधे कोस तक फैले हुए। प्रकारमण्डलेन—चार दिवारी से। परिवृत्तम् —घिरे हुए। परिखावलयेन—खाई से। अधकल्पितव्यायामशालम् —नीचे व्यायामशाला के बने हुए, जिसके नीचे व्यायाम शाला बनी हुई है। अन्वतिष्ठत्—क्रिया। आलोकयामस—देखता था। प्रकटयदभिः प्रकट करते हुए। उदविश्यमाना - बताई हुई।

समास समारूढयौवनारम्भम् समारूढ यौवनारम्भो यस्य सः तम् समारूढयौवनारम्भम् (बहुव्रीहि)। अधीतशेषविद्यम् अधीता अशेषा विद्या येन सः तं अधीतनाशेषविद्यम् (बहुव्रीहि)। दर्शितविनय—दर्शितो विनयः येनासौ दर्शितविनयः (बहुव्रीहि)। अतिचिरदर्शनोत्कण्ठतानि—अतिचिर दर्श उत्कण्ठितानि अतिचिरदर्शनोत्कण्ठतानि (सप्तमी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३२ (३४) अथ वचनान्तरेव ·················· प्रतस्थे।

शब्दार्थ प्रवेशितम्—प्रवेश कराया। अभिप्रमाणम्—बहुत बड़े। अश्वालङ्कारेण घोडों के आभूषणों से। अश्वातिशतम् श्रेष्ठ घोड़ों को। अतिधीरप्रकृतेरपि—धैर्य प्रकृति के होते हुए भी। अतितेजस्वितया —अत्यन्त तेजस्वी होने से। महाप्राणतया शक्तिशाली होने से। सदैवताइव देवता के साथ रहे हुए की भांति। आरोहण—चढ़ने में। अमानुपलोकोचिताः देवलोक के योग्य उज्झितनिजशरीराणि—अपना शरीर छोड़कर। अध्यासत—आश्रय करते हैं, प्रविष्ट होते हैं। मर्षनीय —सहन करने योग्य। आरोहणातिक्रमः—चढ़ने में ढिठाई। आमन्त्रयावभूव—प्रार्थना की। विदिताभिप्राय इव अभिप्राय समझने वाले की नीति। तिर्यक चक्षुषा—तिरछी निगाह से। हर्षारवम् हिनहिनाना दत्ताभ्यनुज्ञ इव—आज्ञा दिये की भांति। स्तूयमान—स्तुति किये जाते हुए।

सन्दर्भ --जब राजकुमार सब विद्याओं में निपुण हो गया तो तारापीड़ ने बलाहक को राजकुमार को लाने के लिए भेजा।

भावार्थ---जब राजकुमार ने घोड़े को पनवे कराने की आज्ञा दी तो इसके बाद ही बहुत बड़े शरीर वाले बो : आभूषणों से सुसज्जित घोड़ों में श्रेष्ठ प्रविष्ट हुए इन्द्रायुद्ध को देखा। उसको देखकर ऐसा श्रेष्ठ घोड़ा पहले न देखने के कारण अत्यन्त धैर्य स्वभाव के होते हुए भी चन्द्रापीड़ के हृदय को आश्चर्य हुआ। उसके मन में आया कि अत्यन्त तेजस्वी तथा शक्तिशाली होने के कारण इसकी यह आकृति देवताओं के समान मालूम पड़ती हैं। जिससे यह मेरे चढ़ने में शङ्का उत्पन्न कर रही है निश्चय ही स्वर्गलोक के योग्य, सामान्य घोड़ों की आकृतियां ऐसी नहीं होती। मुनि के शाप के कारण यह देवताओं के साथ रहने वाले शरीर को छोड़कर इस शरीर में रह रहा हो। निःसन्देह य महात्मा भी किसी शाप का फल भोग रहा है। इसकी अलौकिकता को देखकर मेरा मन यह कह रहा है। इस प्रकार विचार करते हुए आसन से उठ गया। उस घोड़े के पास जाकर मन ही मन प्रार्थना की कि हे महात्मा घोड़े तुम कोई भी हो तुम्हें नमस्कार है मेरे इस प्रकार से चढ़ने की ढिठाई सब प्रकार से क्षमा करने योग्य है। अभिप्राय जानते हुए की भांति इन्द्रायुद्ध चन्द्रापीड़ को तिरछी निगाह से देखकर बहुत सुन्दर ढङ्ग से हिनहिनाया। चन्द्रापीड़ इस हिनहिनाने से यह समझकर कि आज्ञा दे दी गई है, इन्द्रायुद्ध पर सवार हो गया चन्द्रापीड़ घोड़े पर सवार होकर घोड़े पर चढ़े हुए वैशम्पायन के पीछे पीछे आते हुए भाटों के स्तुति करते हुए नगर की ओर चल दिया।

समास उज्झित निजशरीराणि उज्झितानि निज शरीराणि ये एवम् भूतानि उज्झित निजशरीराणि (बहुव्रीहि)। आरोहणातिक्रमः आरोहणेन अतिक्रमः आरोहणातिक्रमः (तृतीया तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३३ (३७) शब्दार्थ . विवेश---प्रवेश किया। प्रतिहारमण्डलैरुपदिश्यमानमार्गः पहरेदारों से मार्ग दिखाते हुए। प्रणम्यमानः प्रणाम करते हुए। [illegible] मङ्गल --महल से उतरने का मङ्गल करते हुए। हसधवलशयन

तले—हंस के समान श्वेत [illegible] पर । [illegible] बैठे हुए । प्रसारितभुजयुगल दोनों हाथ फैलाये हुए । आनन्दपूर्यमाणलोचनम्—आनन्द से हर्ष भरे हुए नेत्रों वाले । भृशम्—बहुत देर तक । उन्मुक्त—छूटा हुआ । पितुश्चरणपीठसमीपे—पिता के चरणों की चौकी के पास में । अभिवाद्य—चरण स्पर्श करके । विसर्जित - विसर्जित करने पर, विदा करने पर । आययो —आप । आमृशन्ती—स्पर्श करती हुई । लम्भिता प्राप्त कराया गया । सोढवान् सहन किया ।

सन्दर्भ - विद्यामन्दिर में वैशम्पायन के साथ चन्द्रापीड़ राजकुल में आ गय तथा पिता की आज्ञा से जाकर सब माताओं को प्रणाम किया ।

भावार्थ इसके बाद चन्द्रापीड़ राजकुल के समीप आया, फिर वन्दीजनों (गाने वालों से) युक्त द्वार वाले राजकुल में प्रवेश किया, वहाँ पर पहरेदारों के द्वारा मार्ग दिखाते हुए राजकर्मचारियों के प्रत्येक के द्वारा प्रणाम किए जाते हुए अन्तःपुर में र ने वाले वृद्धाओं के द्वारा राजमहल में उतरने का मङ्गल करते हुए, हंस के समान श्वेत वर्ण के विस्तर पर बैठे हुए पिता को देखा सिर झुका कर प्रणाम कर लेने पर चन्द्रापीड को यहाँ आओ, यहा आओ इस प्रकार कहते हुए दूर से ही फैलाए हुए आनन्द के जल से भरे नेत्रों वाले पिता ने ब[illegible] तक गले से लगाया । गले से मिलकर हट जाने पर चन्द्रापीड़ पिता की चौकी के पास पृथ्वी पर बैठ गया जाओ बेटा पुत्र के प्रेम वाली अपनी मां बिलासवती को प्रणाम करके फिर क्रमशः दर्शन की लालसा रखने वाली सब माताओं को दर्शन देकर प्रसन्न करो । इस प्रकार पिता से विदा करने पर तब चन्द्रापीड़ विनम्रपूर्वक उठकर तथा राजकर्मचारियों से, दिखाये गये मार्ग से वह अन्तःपुर में आ गया । वहां जाकर माता को प्रणाम किया । उसने शीघ्रता से चन्द्रापीड़ को उठाकर गोद में बिठा लिया वैशम्पायन के बैठ जाने पर चन्द्रापीड़ को बार बार गले लगाकर मस्तक, छाती, भुजा तथा सिर का बार बार स्पर्श करती हुई विलासवती ने उसको कहा कि बेटा तेरे पिता का हृदय बड़ा कठोर है जिसके कारण इस ऐसी आकृति ने इतने समय तक बहुत बड़ा कष्ट प्राप्त किया । तुमने गुरुओं के कठिन बन्धन को कैसे सहन किया । आश्चर्य है कि तू बालक होते हुए भी तेरा धैर्य कठोर व्यक्तियों के महान धैर्य के ही समान है ।

आश्चर्य है कि तुम्हारे गुरुजी के ऊपर कितनी असाधारण भक्ति है इस प्रकार कहकर चुप हो गई।

समास—मागधजनाधिष्ठितम्—मागधजनैः अधिष्ठितम् मागधजनाधिष्ठितम् (तृतीय तत्पुरुष)। उपदिश्यमानमार्ग उपदिश्यमानो मार्गो यस्य सः उपदिश्यमानमार्गः (बहुव्रीहि)। कृतप्रणामम् कृतः प्रणामो येन सः तम् कृतप्रणामम् (बहुव्रीहि)। प्रसारितभुजयुगलम् प्रसारितं भुजयुगलम् येन सः प्रसारितभुजयुगलम् (बहुव्रीहि)। आनन्दजलपूर्यमाणलोचनः—आनन्दजलेन पूर्यमाणे लोचने यस्य सः आनन्दजलपूर्यमाणलोचनः (बहुव्रीहि)। पितुश्चरणपीठसमीपे पितुश्चरणयोः पीठ पितुश्चरणपीठ (षष्ठी तत्पुरुष) पितुश्चरणपीठस्य समीप तस्मिन् पितुश्चरणपीठसमीपे (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३४–३५ (३८) चन्द्रापीड़ .... भवन जगाम।

शब्दार्थ—निर्गत्य निकलकर। आरुह्य—चढ़कर। उपदर्शितविनयः—विनय दिखाते हुए। दूरावनतेन—दूर से ही झुकाये हुए। प्रेम्णा —प्रेम से। अवनावेव—पृथ्वी पर ही। समुद्गत् प्रीतिपुलकैः—प्रेम उत्पन्न होने के कारण रोमांचित। अविशमानहर्षः प्रकप —अत्यधिक हर्ष को प्रकट करते हुए। प्रतिपद्यन्ते—प्राप्त करते हैं। अमानुषी—देवताओं वाली। विसर्जयाञ्चकार —विदा कर दिया।

सन्दर्भ—चन्द्रापीड़ ने अपनी माताओं को प्रणाम किया फिर उनसे विदा लेकर अपनी मन्त्री शुकनास के दर्शन के लिए चल दिया।

भावार्थ—चन्द्रापीड़ ने राजमहल से निकलकर बाहर खड़े हुए इन्द्रायुद्ध नाम के घोड़े पर सवार होकर उसी राजकुमार के साथ शुकनास को देखने के लिए चल दिया कुछ दूर जाकर राजकुल की भांति शुकनास के भवन में प्रवेश किया। शुकनास के भवन में प्रवेश करके विनय दिखाते हुए दूर से ही झुकाये हुए मस्तक से शुकनास को प्रणाम किया शुकनास ने जल्दी से उठकर वैशम्पायन के साथ प्रेम से चन्द्रापीड़ आलिंगन किया। गले मिलने के बाद आदरपूर्वक लाये गये रत्नासन को छोड़कर पृथ्वी पर राजकुमार बैठ गया उसके बाद वैशम्पायन बैठा। प्रेम उत्पन्न होने के कारण रोमांचित .... करते

हुए शुकनास से राजकुमार को कहा कि बेटा आज तुम्हें देखकर महाराज को बहुत दिनों में पृथ्वी के राज्य के फल की प्राप्ति हुई है आज गुरुजनों के आशीर्वाद ने सम्पत्ति का आश्रय किया है अर्थात् आज गुरुजनों का आशीर्वाद फूला फला है। आज कुलदेवता प्रसन्न हुए हैं। निश्चय ही धार्मिक लोग तीनों भुवनों में आश्चर्य पैदा करने वाले आप जैसे ही पुत्रों को प्राप्त नहीं करते। कहाँ तो यह छोटी सी अवस्था ! कहाँ यह मनुष्यों में न होने वाली शक्ति तथा कहाँ यह सम्पूर्ण विद्या प्राप्त करने की सामर्थ्य। तात्पर्य यह है कि इनमें बड़ा अन्तर है अहो ! यह प्रजा धन्य है जिसका पालन करने वाले भरत तथा भगीरथ की ही प्रतिभा के समान आप उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार कहकर राजकुमार को विदा कर दिया। शुकनास के विदा कर देने पर राजकुमार अपने भवन की ओर को चला गया।

समास—उपदर्शितविनयः उपदर्शितो विनयो येन सः उपदर्शितविनय (बहुव्रीहि)। आवेद्यमानहर्षप्रकर्षः आवेद्यमानो हर्षप्रकर्षो यस्य सः आवेद्यमान-हर्षप्रकर्षः (बहुव्रीहि)। गुरुजनाशिषः—गुरुजनानां आशिषः गुरुजनाशिषः (षष्ठी तत्पुरुष)। त्रिभुवनविस्मयजनकाः त्रिभुवनस्य विस्मयजनकाः त्रिभुवनस्मिनज-नकाः (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३६ (३८) गत्वा च········· ····· निमनैषीत्।

शब्दार्थ—अभिषेकादिकम् स्नान आदि। अशनावसानम् भोजन समाप्ति उदन्तेन—वृत्तांत से। अहः—दिन। प्रदोषसमये—सन्ध्या समय में। चरणाभ्यामेव—पैदल ही। शयनतलम् -बिस्तर पर। अधिशिश्ये—सो गया। अघान मारा। जग्राह—पकड़ लिया। अनैषीत् व्यतीत की।

सन्दर्भ—शुकनास से विदा होने पर राजकुमार चन्द्रापीड़ अपने राजमहल में चला गया वहाँ जाकर स्नानादि क्रिया की।

भावार्थ चन्द्रापीड़ ने अपने भवन में जाकर तथा कुछ क्षण के लिए वह बिस्तर पर बैठकर उन राजकुमारों के साथ दिन का व्यापार स्नानादि तथा भोजन आदि किया इस प्रकार के वृत्तांत के साथ चन्द्रापीड़ का वह दिन समाप्त

हो गया। सन्ध्या समय होने पर चन्द्रापीड़ पैदल ही राजकुल में जाकर पिता के पास एक क्षण के लिए रुककर तथा अपनी माता विलासवती के दर्शन करके अपने महल में आकर विस्तर पर सो गया कुछ रात्रि रहते हुए ही प्रभात समय में उठकर तथा पिता की आज्ञा प्राप्त करके शिकार करने के लिए वन को चल दिया। वहां पर वन में हजारों सुअरो, शेरों तथा हिरणों को मारा तथा दूसरे जानवरों को शक्तिशाली होने के कारण जीवित ही पकड़ लिया। सन्ध्या समय में राजकुल को चला गया उसी प्रकार से क्रमशः राजा को देखकर उसने रात्रि व्यतीत की।

समास——प्रदोषसमये—प्रदोषस्य समयः प्रदोषसमयः तस्मिन् प्रदोषसमये (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३५के३६ (४०) अपरेद्यु ....——.... पार्श्वमुमोच।

शब्दार्थ अपरेद्यु —दूसरे दिन। रचितावगुण्ठनया——घूंघट किए हुए। महानुभावाकारया महात्मा के अनुरूप आकृति वाली। कुलुत—कुल्लू प्रदेश। आनीय लाकर। विगतनाथा —जिसका कोई स्वामी न हो, अनाथ। उपलालिता पाली है। परिजनसामान्यदृष्टिना—साधारण नौकरों के समान दृष्टि। चापलेभ्यः —चञ्चलता से। निवारणीया—दूर करनी चाहिए। अविदितशीलः ——स्वभाव को न जानने वाले। अनिमेषलोचन——बिना पलक झपकी आंखों वाले। समुपजातसेवारसा—सेवा में स्नेह उत्पन्न हो गया है जिसको। राजसूनोः — राजकुमार का।

सन्दर्भ—जब राजकुमार अपने भवन में निवास कर रहा था। उसी समय किसी दिन महारानी विलासवती ने एक ताम्बूल करङ्कवाहिनी उसके पास भेजी

भावार्थ—दूसरे दिन प्रातःकाल ही घूंघट किए हुए सुन्दर आकृति वाली एक कन्या के साथ आते हुए कैलाश नाम के कंकूजी को देखा। उसने प्रणाम कर लेने पर विनयपूर्वक चन्द्रापीड़ से निवेदन किया कि राजकुमार! महारानी विलासवती आज्ञा देती हैं कि महाराज ने कुल्लू प्रदेश की राजधानी को जीतकर उनके राजा की पत्रलेखा नाम की इस कन्या को बन्दीजनों के साथ लाकर अन्तःपुर की नौकरानियों के बीच में रख लिया था। मैंने स्नेह के कारण आज तक

उस प्रकार राजकुमारी को ... तुम्हारी ... है। अतः मैंने तुम्हारे लिए उचित समझ इसको ताम्बूलकरङ्कवाहिनी के रूप में भेजा है, इसके साथ साधारण नौकरों जैसा व्यवहार न करना। जिस प्रकार अपनी चित्तवृत्ति को चञ्चलता से रोकते हो उस तरह इसको भी शिष्या समझकर चञ्चलता से रोकना इसको मैं अपनी पुत्री के समान स्नेह करती हूं तुम इसके शील स्वभाव से अपरिचित हो इसलिए तुम्हें सन्देश भेजा जा रहा है। सब प्रकार से तुम्हें ऐसा प्रश्न करना चाहिए जिससे यह तुम्हारी उचित सेवा करने वाली हो जाये यह कह कैलाश ने चुप होकर प्रणाम करने पर पत्रलेखा को बिना पलक को झपकी आंखों से बहुत देर तक देखकर "माताजी जैसी आज्ञा देती हैं" कहकर कञ्चुकी को भेज दिया। उस दिन के दर्शन मात्र से ही सेवा में प्रेम हो गया। जिसको ऐसी पत्रलेखा राजकुमार की समीपता को कभी नहीं छोड़ती थी।

समास—रचितावगुण्ठनया रचितम् अवगुण्ठनम यथा सा तथा रचितावगुण्ठनया (बहुव्रीहि)। महानुभावाकारया महानुभाव इव आकारो यस्या सा त। महानुभावाकारया (बहुव्रीहि)। कृतप्रणामः कृतः प्रणामो येन सः कृतप्रणाम (बहुव्रीहि)। अविदितशीलः—अविदितम् शीलम् येनासौ अविदितशीलः (बहुव्रीहि)। समुपजातसेवारसा - समुपजातः सेवायाम् रसो यस्याः सा समुपजात सेवारसा (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ३६–३७ (४१) एवं .... तपागुपदेष्टारः।

शब्दार्थ—जिगीषुर् —करने की इच्छा वाला। उपकरण—सामग्री। वेदितव्यस्य—जाने योग्य का। निसगत एव —स्वभाव से ही। अतिगहनम्—बहुत गूढ़। लक्ष्मीमदा—सम्पत्ति का अहंकार। गर्भेश्वरत्वम्—बालकपन। अभिनवयौवनत्वम्—जवानी। अप्रतिरूपत्वम् -अत्यधिक सौन्दर्य। अनर्थ परम्परा—कष्ट परम्परा। मतिमताम्—दुर्बुद्धि वालों का। कालुष्यमुपयाति - विपरीत हो जाती है। इन्द्रियहरिणहारिणी इन्द्रिय रूपी मृगों का हरण करने वाली। मृगतृष्णिका—मरुमरीचिका, रेत में पानी की आशङ्का, भ्रम। भाजनानि पात्र। अनास्वादितविषय रसस्य —विषय रूपी रस के अनुभव से रहित। अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् सम्पूर्ण कालुष्य को धोने में समर्थ

सन्दर्भ—जब राजा तारापीड़ की इच्छा [illegible] को युवराज बनाने की हुई तब शुकनास मन्त्री ने चन्द्रापीड़ को उपदेश दिया।

भावार्थ—इस प्रकार समय व्यतीत होते हुए एक बार पुत्र चन्द्रापीड़ का युवराज्याभिषेक करने की इच्छा वाले राजा तारापीड़ ने अभिषेक सामग्री इकट्ठा करने के लिए नौकरों को आज्ञा दी। उस समय दर्शन करने के लिए आए हुए अत्यन्त विनम्र चन्द्रापीड़ को शुकनास ने विस्तारपूर्वक कहा कि बेटा चन्द्रापीड़ जानने योग्य सम्पूर्ण बातों को जाने हुए तथा सम्पूर्ण शास्त्रों का अध्ययन किए हुए तुम्हारे लिए थोड़ी भी वस्तु उपदेश करने योग्य नहीं रही है स्वभाव से ही केवल युवावस्था का अन्धकार बड़ा गूढ़ है। ऐश्वर्य का अहंकार बड़ा भयङ्कर है बालकपन, युवापन दूसरों से समानता न रखने वाला सौन्दर्य तथा देवत्व शक्ति, ये सब कष्ट की परम्परा है। इनमें से एक भी दुर्बुद्धि वालों के लिए पर्याप्त है फिर जहां पर यह सब इकट्ठी हो जाए तो वहां का क्या कहना। युवावस्था में शास्त्र के जल से साफ की हुई बुद्धि भी कालुष्य को प्राप्त हो जाती है इन्द्रिय रूपी मृगों का हरण करने वाली यह उपभोग रूपी मृगमरीचिका निरन्तर अन्त तक दुख देने वाली होती है विषयों के प्रति अत्यन्त आसक्ति मनुष्य का विनाश कर देती है। आप जैसे ही उपदेश के पात्र होते हैं। विषय रस के अनुभव से हीन आपके लिए यही उपदेश का समय है गुरुओं का उपदेश तो पुरुषों के लिए तो सम्पूर्ण कालुष्य को धोने में समर्थ बिना जल के स्नान के समान होता है। विशेष करके राजाओं के लिए क्योंकि राजाओं को उपदेश करने वाले थोड़े ही मनुष्य होते हैं।

समास—उपकरणसंभारसंग्रहणार्थम्—उपकरणस्य संभारः तस्य संग्रहणार्थम् उपकरणसंभारसंग्रहणार्थम् (षष्ठी तत्पुरुष)। अधीतसर्वशास्त्रस्य अधीतानि सर्वाणि शास्त्राणि येन सः तस्य अधीतसर्वशास्त्रस्य (बहुव्रीहि)। शास्त्रजलप्रक्षालितनिर्मला शास्त्रजलेन प्रक्षालनम् तेन निर्मला शास्त्रजलप्रक्षालननिर्मला शास्त्रजलप्रक्षालितनिर्मला (तृतीया तत्पुरुष)। इन्द्रियहरिणहारिणी इन्द्रियहरिणानाम् हारिणी इन्द्रियहरिणहारिणी (षष्ठी तत्पुरुष)। अनास्वादितो विषयरसो येन सः

तस्य अनास्वादितविषयरसस्य (बहुव्रीहि) । अखिलम् अक्षालितक्षमम् अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् अखिलमलप्रक्षालनक्षमम् (सप्तमी तत्पुरुष) ।

पृष्ठ ३७–३८ (४२) आलोकयतु ... . गुरून् ।

शब्दार्थ —पाल्यते——रक्षा की जाती है । अनुवर्तते —पीछे चलती है । वैदग्ध्यम् —पण्डिताई । आदियते—आदर करती हैं । आवध्नाति——रखती है । सरस्वतीपरिगृहीतम् विद्वानों को । गुणवन्तम्—गुण वाले को । उदारसत्वम् दयालु को । उपगूढ चंगुल में फंसना । विप्रलम्भ——ठगा जाना । विक्लवं विह्वल, बेचैन । स्वार्थनिष्पादनपरैं—स्वार्थ सिद्ध करने वालों से । प्रतारणकुशलै ठगने में चतुर । अमानुपोचिताभि: देवलोक के योग्य । दर्शनप्रदानम् दर्शन देना । अभ्युत्तिष्ठिन्ति —उठते हैं ।

सन्दर्भ — शुकनास चन्द्रापीड़ को लक्ष्मी के विषय में उपदेश दे रहे हैं ।

भावार्थ—पहले आप लक्ष्मी को ही देखें इस संसार में इस दुष्टा के समान को भी अपरिचित नहीं है । लक्ष्मी प्राप्त होने पर भी इसकी रक्षा कठिनता से होती है । यह परिचय की ओर भी ध्यान नहीं देता है । न अपने आत्मीय को हीं देखती है । न कुल क्रम का ही अनुसरण करती है अर्थात् इस कुल में पहले से मैं रहती आई हूं अत: अब इसको छोड़ना नहीं चाहिए, इसका भी ध्यान नहीं करती, न मनुष्य के सौजन्य को देखती है, न पाण्डित्य को गिनती है, न शास्त्रों को सुनती है, न धर्म से रुकती है, न दान का आदर करती है, न त्रिकालदर्शी का ध्यान करती है, न सदाचार का पालन करती है, अब भी यह किसी स्थान पर निश्चल पैर नहीं रखती, पढ़े लिखे लोगों से ईर्ष्या की भांति आलिंगन नहीं करती अर्थात् यह विद्वानों के पास नहीं जाती । गुणी मनुष्यों को अपवित्र समझ कर उनको स्पर्श नहीं करती, यालु मनुष्यों का सम्मान नहीं करती, वीर मनुष्यों को कांटे की भांति स्मरण नहीं करती, नम्र मनुष्य को पागल समझकर उनके पास नहीं जाती, तपस्वी मनुष्यों को पागल समझकर उनका उपहास ही करती है । जैसे जैसे घर में लक्ष्मी बढ़ती है वैसे वैसे ही दीपक की भाँति बुरे कामों की उल्टी करती है । मैं ऐसा कोई मनुष्य नहीं देख रहा हूँ जो अपरिचित इस लक्ष्मी के चंगुल में नहीं फंसा अथवा जो इससे ठगा नहीं गया । ऐसी इस-

दुराचारिणी लक्ष्मी के द्वारा भाग्य वश ठगे गये राजा लोग विह्वल हो जाते हैं तथा दुष्ट बुद्धि वालों के चंगुल में फंस जाते हैं। अतः कुशल लोग तो जिसकी मृत्यु निकट आ गई है उसकी भाँति अपने बन्धुओं को नहीं पहचानते तथा इनके अतिरिक्त दूसरे लोग स्वार्थ सिद्ध करने वालों के ठगने में चतुरों के धूर्तों के ही द्वारा देवलोक के योग्य स्तुतियों से ठगे जाकर लोगों की हंसी के पात्र होते हैं। दर्शन देना भी दया में गिनते हैं। यदि ये किसी की ओर देख लेते हैं तो सोचते हैं कि हमने इनका बड़ा भारी उपकार किया है। किसी को आज्ञा देकर सोचते हैं कि हमने इन्हें वरदान दे दिया है। यदि किसी से इनका स्पर्श हो गया तो सोचते हैं कि हमारे स्पर्श से यह पवित्र हो गया है। झूठी बड़ाई के अभिमान में आकर देवताओं को प्रणाम नहीं करते, ब्राह्मणों की पूजा नहीं करते, सम्मान करने योग्य का सम्मान नहीं करते, पूजा करने योग्य की पूजा नहीं किया करते, प्रणाम करने योग्य को प्रणाम नहीं करते, गुरुओं के सम्मुख उठकर खड़े नहीं होते।

समास—सरस्वतीपरिगृहीतम्—सरस्वत्या परिगृहीतम् सरस्वतीपरिगृहीतम् (तृतीया तत्पुरुष)। उदारसत्त्वम्—उदारं सत्व यस्य: सः तम् उदारसत्वम् (बहुव्रीहि)। मिथ्यामहात्म्यगर्वनिर्भराः—मिथ्यामहात्म्यस्य गर्वम् मिथ्यामहात्म्यस्य-गर्वम् (षष्ठी तत्पुरुष)। मिथ्यामाहात्म्यस्यगर्वनिर्भराः (सप्तमी तत्पुरुष)।

पृष्ठ २९ (४२) अपि च ·········· ···उद्भावयति।

शब्दार्थ वैक्लव्यम् अङ्गों का विचलित होना। प्रलम्पितम्—व्यर्थ की बकवाद। आत्मप्रज्ञापरिभवः—अपनी बुद्धि का तिरस्कार। असूयन्ति—ईर्ष्या करते हैं। हितवादिने हित की बात कहने वाले के लिए। उपरिचताञ्जलि—हाथ जोड़े हुए। अधिदैवतम् इव इष्ट देवता की भाँति। विगतान्यकर्त्तव्य—दूसरे कर्त्तव्यों को छोड़े हुए। उद्भावयन्ति—वर्णन करते हैं।

सन्दर्भ शुकनास चन्द्रापीड़ को उपदेश देते हुए कह रहा है कि—

भावार्थ—ऐसे लोग बड़े बूढ़ों के उपदेश को यह समझते हैं कि इसके अङ्ग बुढ़ापे के कारण विचलित हो गये हैं। अतः यह तो व्यर्थ ही बकवास करता है

अपनी बुद्धि का तिरस्कार समझकर मन्त्रियों के उपदेश से ईर्ष्या करते हैं हि की बात कहने वाले से क्रोध करते हैं जो सब कर्तव्यों को छोड़कर दिन रा निरन्तर हाथ जोड़े हुए इष्ट देवता की भांति महात्म्य गाता रहता है सब प्रका से ये उसका अभिनन्दन करते हैं, उसके साथ ही वार्तालाप करते हैं, उसको पास में रखते हैं, उसको ही बहुमूल्य वस्तुयें देते हैं, उसके साथ ही मित्रता कर हैं, उसकी ही बातों को सुनते हैं, उसके ऊपर ही वर्षा करते हैं, उसका सम्मा करते हैं तथा उसको ही बड़ा मानते हैं।

समास—जरावैक्लव्यप्रलापितम्—जरायाः वैक्लव्यम् जरावैक्लव्यम् (षष्ठी तत्पुरुष) जरावैक्लव्येन प्रलपितम् जरावैक्लव्य प्रलपितम् (तृतीया तत्पुरुष) आत्मप्रज्ञापरिभवः—आत्मनः या प्रज्ञायाः परिभवः आत्मप्रज्ञापरिभवः (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ३८—३६ (४४) तदैव.............. आर्जगाम्।

शब्दार्थ—कुटिल चेष्टा सहस्रदारुणे—हजारों कुटिल चेष्टाओं के कारण भयङ्कर। प्रयतेथा—प्रयत्न करना चाहिए। नाक्षिप्यसे वश में होना। कामम् —पर्याप्त। समारोपितसंस्कार संस्कार जमाये हुए, संस्कार किए हुए। तरल हृदयम्—चञ्चल हृदय वाले। अप्रतिबुद्धम् ज्ञान रहित। मदयन्ति—मदान्ध कर देता है। मुखरीकृतवीन् —कहने के लिए बाध्य करना। खली करोति—दुष्ट बना देती है। अवनतय नीचे झुकाओ। उन्नमय—ऊपर उठाओ। विजिताम्—विजय की हुई। आरोपयितुम्—बढ़ाने का प्राप्त करने का। उपशशाम —शांत हो गया। प्रक्षालित इव स्वच्छ किए हुए की भाँति।

सन्दर्भ शुकनास चन्द्रापीड़ को उपदेश दे रहे हैं।

भावार्थ शुकनास चन्द्रापीड़ को कहते हैं कि हे राजकुमार! हजारों कुटिल चेष्टाओं के कारण भयङ्कर इस राज्यतन्त्र में तथा अत्यन्त मोह से भरे हुए इस यौवन में ऐसा प्रयत्न करो जिससे मनुष्य तुम्हारी हंसी न उड़ा सकें, सज्जन लोग निन्दा न करें, गुरुजन धिक्कार न दें, मित्र लोग उपालम्भ न दें, विद्वान लोग ... न करें, दुष्ट तुम्हें छल न सकें अथवा ठग

न सकें, नौकर अनिष्ट न कर सकें, धूर्त ठग न सकें, स्त्रियाँ लोभ में न फंसा सकें, अहंकार से न नाचो, कामदेव तुम्हें पागल न कर सकें, विषय भोग वश में न कर सकें, स्नेह तुम्हें खींच न सके ; वैसे तुम स्वभाव से ही धैर्यशाली हो, पिता ने तुम्हारे सब संस्कार किए हैं। चञ्चल हृदय वाले तथा धनरहित पुरुषों को धन मदान्ध बना देता है फिर भी तुम्हारे गुणों से जनित सन्तोष ने मुझको उपदेश के लिए प्रेरित किया है क्योंकि विद्वान; ज्ञानी, साहसयुक्त, कुलीन, धैर्यशाली तथा प्रयत्नवान पुरुषों को भी यह दुष्ट लक्ष्मी उन्मार्गगामी बना देती है। सब प्रकार के कल्याणों से पिता द्वारा किए नव राज्याभिषेक मंगल का आप ही अनुभव करो। वंश परम्परा से आए हुए पुरुषों द्वारा उठाए हुए भार को तुम भी उठाओ। शत्रुओं के सिर को नीचा करो बन्धुओं को ऊपर उठाओ अभिषेक के बाद दिग्विजय के लिए भ्रमण करते हुए सात द्वीपों वाली अपने पिता द्वारा विजय की हुई पृथ्वी को तुम फिर जीतो। यह तुम्हारा अपने प्रताप को बढ़ाने का समय है। प्रतापशाली राजा तीनो लोकों को देखने वाले सिद्ध के ही समान होता है, इतना कहकर शुकनास चुप हो गये। शुकनास के चुप हो जाने पर चन्द्रापीड़ उन उपदेशों से निर्मल हुए की प्रतिभासन्न हृदय होकर एक क्षण के लिए वहां रुककर अपने भवन में चला गया।

समास अतिकुटिलचेष्टासहस्त्रदारुणे -- अतिकुटिलचेष्टानां सहस्त्र (षष्ठी तत्पुरुष)। अति कुटिल चेष्टासहस्त्रेण दारुणे अतिकुटिलचेष्टा सहस्त्रदारुणे (तृतीय तत्पुरुष)। तरल हृदयम् तरलम् हृदयम् यस्य सः तम् तरल हृदय (बहुव्रीहि)। नवयौवनराज्यभिषेक मङ्गलम्—नवयौवनस्य यद् राज्याभिषेकः येन यत् मङ्गल ; नवयौवनराज्याभिषेकमङ्गलम् (कर्मधारय)।

पृष्ठ ३९–४० (४४) ततः·········· आवासभूमिमवाप।

शब्दार्थ—उत्क्षिप्तमङ्गलकलशः—मङ्गल कलश उठाए हुए। साभाहृतेन—इकट्ठे किए हुए। अभिषेकसकलिलार्द्रदेहम्——अभिषेक के जल से भीगी हुई देह वाले को। कांचनमयम् —सोने के। दिग्विजयप्रयाणशंसी —दिग्विजय के लिए गमन को बताने वाली। आमन्थरम्—धीरे धीरे। दध्वान बजने लगा। समुद्घुष्यमाणजयशब्दः —जय शब्द की घोषणा। पलिकृतीम्—पूर्व। आ ाम्—दिशा

को । आवभाषे बोला । प्रसाधितानि——वश में करना । पटमण्डपशत शोभिनीम्—सैकड़ों तम्बुओं से सुशोभित । आवासभूमिम् निवास भूमि । अवाप — प्राप्त किया ।

सन्दर्भ शुकनास का उपदेश ग्रहण करके चन्द्रापीड़ दिग्विजय के लिए चल पड़ा ।

भावार्थ कुछ दिन व्यतीत होने पर राजा ने स्वयं मङ्गल कलशों को उठाकर शुकनास के साथ पवित्र दिन में, सब तीर्थों के, सब नदियों के, सब समुद्रों के इकट्ठे किए हुए मन्त्रों द्वारा पवित्र किए जल से पुत्र का अभिषेक किया। अभिषेक के जल से भीगी हुई देह वाले चन्द्रापीड़ के पास उस क्षण राजलक्ष्मी आ गई । राजलक्ष्मी को प्राप्त करके चन्द्रापीड़ सोने के सिंहासन पर इस प्रकार चढ़ा जैसे चन्द्रमा मेरु पर्वत के ऊपर चढ़ता है । सिंहासन पर कुछ क्षण रुककर चन्द्रापीड़ के दिग्विजय के गमन को बताने वाली दुन्दुभी धीरे धीरे बजने लगे। दुन्दुभी की आवाज को सुनकर तथा चारों ओर से जय जय शब्द को सुनकर चन्द्रापीड़ सिंहासन से चल दिया । सबसे पहले धीरे धीरे पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान कर दिया तब चन्द्रापीड़ की बड़ी सेना को देखकर आश्चर्यान्वित होकर चारों ओर को देखते हुए वैशम्पायन ने चन्द्रापीड़ को कहा कि युवराज जी! महाराजधिराज तारापीड़ ने क्या नहीं जीता जिसको आप जीतेंगे ? उन्होंने कौन सी दिशा वश में नहीं की, जिसे आप वश में करेंगे ? ऐसा कौन सा दुर्ग है जो उन्होंने वश में नहीं किया है, आप जिसे वश में करेंगे ? वह दूसरे द्वीप कौन से हैं जो उन्होंने अपने अधिकार में न किए हों आप जिस पर अधिकार करेंगे ? वे कौन से रत्न हैं जो उन्होंने न प्राप्त किए हैं ? कौन से राजा उनके सामने नहीं झुके हैं ? कौन से राजाओं ने अपनी सेवायें उनके मस्तक पर नहीं चढ़ाई हैं ? वैशम्पायन के इस तरह कहते हुए युवराज तम्बुओं से सुशोभित विश्राम स्थान को चले गये ।

समास——उत्क्षिप्तमङ्गलकलशः -उत्क्षिप्तौ मङ्गलकलशौ येन स उत्क्षिप्त मङ्गलकलशः (बहुव्रीहि) । अभिषेकजलार्द्रदेह अभिषेकस्य सलिलेन आर्द्रो देहो

तस्य सः ...... (बहुव्रीहि)। उपजातविस्मयः उपजातो विस्मयो यस्य स, उपजातविस्मयः (बहुव्रीहि)। दत्तदृष्टि दत्ता दृष्टिर्येनासौ दत्त-दृष्टि (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४०-४१ (४५) स्थाँच............प्रतिष्ठित।

शब्दार्थ समेत्य पास आकर। विनोद्यमानः—आमोद प्रमोद करते हुए पितृवियोगजन्मना —पिता के वियोग से उत्पन्न। आयास्यमानहृदय —दुखित हृदय वाला। अत्यवाहतन् व्यतीत किया। यामिनीम् रात्रि को। पितृसत्कम् —पिता सम्बन्धी। जाग्रदेव जागते हुऐ ही। निन्य व्यतीत की। प्रत्युषे —प्रभात। जर्जरयन्—शिथिल करते हुए। आकम्पयन् —कपते हुए। प्रतीच्छन् —स्वीकार करते हुए। त्रिशंकुतिलकाम्—दक्षिण दिशा। वरुणलांछिताम् पश्चिमी दिशा। नातिविप्रकृष्टम् जो अधिक दूर नहीं।

संदर्भ—वैशम्पायन के साथ चन्द्रापीड़ अपने विश्राम स्थान पर गये, वहाँ जाकर राजा तारापीड़ के समान सब क्रियाओं को किया।

भावार्थ- विश्राम स्थान पर पहुंचकर चन्द्रापीड़ की तरह सब राजाओं तथा मन्त्रियों को पास बुलाकर अनेक प्रकार की क्रियाओं से आमोद प्रमोद करते हुए पिता के वियोग से उत्पन्न शोक के कारण दुखित हृदय वाले चन्द्रापीड़ ने दुख के साथ सम्पूर्ण दिन को व्यतीत किया। दिन व्यतीत करने पर चन्द्रापीड़ ने पिता सम्बन्धी तथा वैशम्पायन के पिता शुकनास सम्बन्धी बातों को करते हुए अधिक निद्रा न आने के कारण प्रायः जागते हुए ही रात्रि को व्यतीत कर दी। प्रातःकाल उठकर उसी प्रकार अपने सेना समूह से पृथ्वी जर्जरित करते हुए पर्वतों को कंपाते हुए, तालाबों को खाली करते हुए, वनों को उजाड़ते हुए, दुर्गों को नष्ट करते हुए, डरे हुओं को धैर्य देते हुए, शरण में आए हुओं की रक्षा करते हुए, उपायनों को स्वीकार करते हुए, हाथों को पकड़ते हुए, देश की व्यवस्था का आदेश देते हुए, अपने चिन्हों को स्थापित करते हुए, अपने से बड़ों की पूजा करते हुए, मुनियों को प्रणाम करते हुए, अपने गुणों को फैलाते हुए पृथ्वी पर विचरण किया। पहले पूर्व दिशा, इसके बाद दक्षिण दिशा, फिर

पश्चिम दिशा तथा इसके बाद उत्तर दिशा की विजय किया। तीन वर्ष में सम्पूर्ण दूसरे द्वीपों को अपने अधिकार में करके सम्पूर्ण भू मण्डल में भ्रमण किया। इसके बाद कैलाश पर्वत के पास विचरण करने वाले हेमकूट नामक जाति के किरातों के रहने के स्थान सुवर्णपुर को जो कि पूर्वी समुद्र के निकट ही था जीतकर अपने अधिकार में कर लिया। पृथ्वी पर भ्रमण करने से थकी हुई अपनी सेना के विश्राम के लिए कुछ दिनों के लिए ही चन्द्रापीड़ सुवर्णपुर में ठहरा।

समास—अतिवाहितदिवसा—अतिवाहिता दिवसो येनासो अतिवाहितदिवस (बहुव्रीहि)। त्रिशंकुतिलकाम् त्रिशंकुरेव तिलको यस्या सा ताम् त्रिशंकुतिलकं (बहुव्रीहि)। धारणितल पर्यटनम् धरणितलपर्यटनम् (सप्तमी तत्पुरुष) धरणितल पर्यटनखिन्नस्य (तृतीय तत्पुरुष)।

पृष्ठ ४१–४२ (४६) एकदा.................. व्यावर्त्तयामास।

शब्दार्थ—यदृच्छायी—अपनी इच्छा से। शैलशिखरादवतीणम्: पर्वत की चोटी से उतरते हुए। पुरुषदर्शनत्रासंप्रधावितम्—पुरुष के देखने से डरकर भागते हुए। अतिरभासाकृष्टचेता:——अत्यन्त तेजी से खींच लिया गया मन जिसका। महाजवतया बहुत तेज चाल के कारण। अध्वानाम्—रास्ता। प्रस्तर प्रतिहत मतिप्रसर: —पत्थरों के कारण रुक गई है गति जिसकी। स्वेदार्द्र शरीरम्—पसीने से भीगे हुए शरीर वाले। बालिशचरितेपुनिन्दित—चेष्टाओं में। उत्सृष्ट—छोड़े हुए। अनुयायि—पीछे चलने वाले। प्रतिनिवृत्य—लौटकर। सीमांत-रेखा—हद्द। व्यावर्तयामास—लौटा दिया।

संदर्भ—सुवर्णपुर में रहते हुए एक दिन चन्द्रापीड़ इन्द्रायुद्ध नाम के घोड़े पर चढ़कर वन में शिकार खेलने के लिए चल दिया। वन में उसने एक किन्नरों के जोड़े को देखा तथा उसके पीछे दौड़ते हुए चन्द्रापीड़ अपरिचित स्थान को पहुंच गया।

भावार्थ सुवर्णपुर में रहते हुए एक दिन इन्द्रायुद्ध पर चढ़कर वन को शिकार के लिए निकलकर वन में अपनी इच्छा से घूमते हुए चन्द्रापीड़ ने पर्वत की चोटी से उतरते हुए किन्नरों के जोड़े को देखा अद्भुत आकृति होने के

कारण आश्चर्य हुआ उनको पकड़ने की इच्छा वाला, आदरपूर्वक उनके समीप जाता हुआ, मनुष्य दर्शन से डरकर भागते हुओं का पीछा करता हुआ इन्द्रायुद्ध के द्वारा अकेला मिलकर चन्द्रापीड़ अपनी सेना से बहुत दूर चला गया। मैंने यहां पकड़ लिया, यह पकड़ लिया, यह पकड़ा इस प्रकार उनके चित्र को खींचते हुए तथा घोड़े की तेज चाल के कारण क्षण मात्र में उस स्थान से १५ कोस रास्ता पार कर गया। यह किन्नरों का जोड़ा चन्द्रापीड़ को सामने आता हुआ देखकर पर्वत की ऊंची चोटी पर चढ़ गया। उसके चढ़ जाने पर धीरे २ उसके पीछे चलने वाली दृष्टि को रोककर पत्थरों के कारण गति के रुक जाने पर चन्द्रापीड़ ने उस समय पसीने से भीगे हुए इन्द्रायुद्ध तथा अपने शरीर को देखकर स्वयं ही विचार किया कि मैंने व्यर्थ ही परिश्रम क्यों किया ? इस किन्नरों के जोड़े को पकड़ने अथवा न पकड़ने से मेरा क्या प्रयोजन ! यदि इसे पकड़ लिया तब क्या और यदि न पकड़ा तब क्या ! यह सब मेरी मूर्खता है। आश्चर्य है कि मैंने व्यर्थ हठ किया। आश्चर्य है कि मैं नीच कर्म की ओर गया हूं। सिर पर भूत व्यर्थ की भांति मैं अपने परिवार को छोड़कर इस भूमि में क्यों आया हूं। मालूम नहीं कि मेरे अनुयायी तथा मेरी सेना यहां से कितनी दूर रह गई है ? मैंने आते समय घोड़े की चाल के कारण किन्नरों के जोड़े पर दृष्टि लगाए हुए इस वन में रास्ता भी नहीं देखा, जिससे लौटकर चला जाऊं इस प्रदेश में प्रयत्नपूर्वक घुमने से मुझे कोई मनुष्य नहीं मिला, जो सुवर्णपुर जाने वाले रास्ते को बता दे मैंने बहुत लोगों को कहते हुए सुना है कि सुवर्णपुर से उत्तर दिशा में पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के निवास की हद है उससे पहले मनुष्यों से रहित वन है, उस वन को पार करके कैलाश पर्वत है। इसलिए इस समय लौटकर स्वयं अकेले ही देख देखकर केवल दक्षिण दिशा की ओर ध्यान करके चलना चाहिए। अपने किए हुए दोषों का फल भोगना ही चाहिए। यह विचार करके घोड़े को लौटा लिया।

समास समुपजातकुतूहल—समुपजातम् कुतूहलम् यस्य सः समुपजातकुतूहलः (बहुव्रीहिं)। कृतग्रहणाभिलाषः कृतो ग्रहणभिलाष येनासौ कृतग्रहणाभिलाषः (बहुव्रीहि) पुरुषदर्शनत्रास प्रधावितम्—पुरु दर्शनात् त्रासः पुरुषदर्शन-

मासः (पञ्चमी तत्पुरुष) । पुरुष .... प्रकाशितः
(तृतीया तत्पुरुष) । प्रतिरभसाकृष्ट चेताः—प्रतिरभसा आकर्षितम् चेतो यस्य सः
प्रतिरभसाकृष्ट चेताः (बहुव्रीहि) । प्रस्तर प्रतिहत गतिप्रसरः—प्रस्तरैः प्रति-
हतगति प्रसरो यस्य सः प्रस्तर प्रतिहत ते प्रसरः (बहुव्रीहि) । स्वेदार्द्र शरीरम्
—स्वेदेन आर्द्रं शरीर यस्य सः तम् स्वेदार्द्र शरीरम् (बहुव्रीहि) । उत्कृष्टनिजप-
रिवारः उत्कृष्टो निज परिवारो येनासौ—उत्कृष्ट निज परिवारः ।

पृष्ठ ४२ (४८) निवर्तिततुरङ्गमश्च ... ... दृष्टिवान ।

शब्दार्थ —मध्यमलमकरोति मध्य भाग को सुशोभित करती है । परिश्रान्ता —थक गया । सरसी तालाब में । स्नातपीतोदकम्—स्नान करके पानी पिला कर । अन्वेषमाणः —खोज करते हुए । चरणोत्थापित —पैरों से उठाई गयी । पङ्कपटलैरार्द्रिकृतम्—कीचड़ के समूह से भीगे हुए । प्रतिपम् —उसकी ओर । तरुषण्डम्—वन में । प्रचेतसः—वरुण के ।

संदर्भ—कैलाश पर्वत से लौटकर चन्द्रापीड़ प्यास से व्याकुल हो गया तथा घोड़े को भी थका हुआ समझकर उसने पानी की खोज की ।

अर्थ—घोड़े को लौटा कर चन्द्रापीड फिर विचार करने लगा कि भगवान सूर्य ने इस समय शोभा से दिन के मध्य भाग को अलंकृत किया है । वह यह इन्द्रायुद्ध भी थक गया है । तब किसी तालाब में स्नान कराके तथा पानी पिला कर इसकी थकावट को दूर करके तथा स्वयं पानी पीकर किसी पेड़ की छाया में कुछ देर विश्राम करके चलूंगा । इस प्रकार से विचार करके पानी की खोज करते हुए बार बार इधर उधर दृष्टि घुमाते हुए हाथियों के समूह के चरणों से उठाए गए कीचड़ के समूह से भीगे हुए रास्ते को देखा । पानी की शङ्का के उत्पन्न होने से उस मार्ग की ओर जाते हुए कुछ रास्ता पार करके, उसी कैलाश पर्वत की पूर्वोत्तर दिशा में एक बहुत बड़ा वन देखा तथा चन्द्रापीड उसमें को प्रविष्ट हो गया । इस वन के बीच में प्रवेश करके वरुण के शीशे की भाँति ऊपर तक भरे हुए होने पर भी समस्त वस्तुओं के स्पष्ट दिखाने के कारण खाली की भांति उपलक्षित होते हुए, अत्यन्त सुन्दर, दृष्टि को प्रसन्न करने वाले अच्छोद नाम के तालाब को देखा ।

समास निर्वर्तिततुरंगम---निर्वर्तितः तुरंगमो येनासौ निर्वर्तिततुरंगम् (बहुव्रीहि)। स्नातपीतोदकम्--पूर्वं स्नातः पश्चात्पीतम् उदकम् येनासौ तम् स्नातपीतोदकम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४२ (४६) अहो .... निसपाद च।

शब्दार्थ—उपगतम् --प्राप्त हुआ। अवसानभूमिः --अन्तिम स्थान। आन्यायति—बढ़ाती है। व्यपनीतपर्याणम्—छोड़ने की थकावट को दूर करना। क्षितितलुठितोत्थितम् पृथ्वी पर लेट कर उठे हुए। गृहीतयवसग्रासम्—जौ के घास को खाए हुए। सरःसलिलदुद्गतात्—तालाब के पानी से उग आया था आस्तीर्य बिछाकर।

सदर्भ---जब चन्द्रापीड जल की खोज कर रहा था तब उसे एक दिन के अंदर एक तालाब मिला तथा वह पानी पीने के लिए उस तालाब पर गया।

भावार्थ - आश्चर्य है कि किन्नर युगल का अनुसरण निष्फल होकर भी इस तालाब को देखते ही सफलता को प्राप्त हो गया। आज मैंने सौंदर्य का अन्त देख लिया है दर्शनीय वस्तुओं की अवसान भूमि को मैंने देख लिया है निश्चय ही तालाब अत्यन्त निर्मल होने के कारण नेत्रों में प्रेम पैदा करता है ठण्डक के कारण स्पर्श सुख प्रदान करता है, कमलों की सुगन्धी से नासिका का भी आनंद बढ़ रहा है, हंसो के बोलने से कानों को आनन्द देता है। स्वादिष्ट जल होने के कारण जिह्वा को भी प्रसन्न करता है। निश्चय ही भगवान शङ्कर इसके दर्शनों की इच्छा से ही कैलाश में रहने के व्यसन को नही छोड़ते इस प्रकार विचार करते हुए ही उस तालाब के दायें किनारे को प्राप्त करके घोड़े से उतर गया। घोड़े से उतरकर इन्द्रायुद्ध की थकावट को दूर किया। पृथ्वी पर लेकर उठे हुए इन्द्रायुद्ध को तालाब में उतारकर पानी पिए हुए तथा इच्छानुसार स्नान किए हुए घोड़े को लाकर निकटवर्ती पेड की जड़ में सोने की जञ्जीर से पैरों को बाँधकर स्वयं चन्द्रापीड भी पानी में उतर गया। इसके बाद दोनो हाथ धोने पर तत्कालीन [illegible] मिश्रित कलेवा करके तालाब के जल उगी हुई घास की बिछावन को एक पत्थर की शिला पर बिछाकर बैठ गया।

समास कैलासनिवासव्यसनम् कैलासे निवासो कैलासे निवासः (सप्तमी तत्पुरुष)। कैलासनिवासस्य व्यसनम् कैलासनिवासव्यसनम् (षष्ठी तत्पुरुष)। गृहीतकवलग्राम येनासौ तम् गृहीतयवग्रासम् (बहुव्रीहि)। प्रक्षालितकरयुगलः — प्रक्षालित करयुगल येनासौ प्रक्षालितकर युगलः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४३–४४ (५०) मुहूर्त ....प्रतक्षमाणस्तस्यौ।

शब्दार्थ – श्रुतिसुभगम्—कानों को अच्छा लगने वाला। सम्भूति – सम्भव होना आततवायास्तय – अधिक दूर होने से। प्रयत्नव्यापुतलोचन, प्रयत्नपूर्वक देखने पर भी। अष्टादश वर्षदेशीय अट्ठारह वर्ष के लगभग। प्रतिपन्नपाशुपतव्रताम् भगवान शङ्कर के व्रत में लगी हुई।

संदर्भ—जब चन्द्रापीड़ शिला पर बैठ गया तब उसने एक अलौकिक गीत सुना उसे सुनकर घोड़े पर सवार होकर वह उसी दिशा की ओर चल दिया।

भावार्थ – कुछ क्षण विश्राम करने पर चन्द्रापीड़ ने उस तालाव के उत्तरी प्रदेश में कानों को अच्छा लगने वाला, वीणा की झंकार से मिला हुआ एक अलौकिक गीत सुना। गीत सुनकर उसने विचार किया कि इस मनुष्य से रहित प्रदेश में गीत कैसे सम्भव हो सकता है इस प्रकार आश्चर्यान्वित हुए चन्द्रापीड़ ने अपनी आंख उस गीत की उत्पत्ति को सूचित करने वाली दिशा की ओर ही लगा दी। उस प्रदेश के अधिक दूर होने के कारण प्रयत्नपूर्वक देखने पर भी कुछ न देख सका। केवल निरन्तर उस गीत शब्द को ही सुना। आश्चर्य से चलने के लिए तैयार किए इन्द्रायुद्ध पर चढ़कर उस गीत ध्वनि की ओर चल दिया। कुछ दूर जाकर चन्द्र प्रभा नाम के पश्चिमी किनारे पर भगवान शङ्कर शून्य सिद्धयतन को देखा। वहाँ प्रवेश करके तीनो भवनों में पूजित चरणों वाले और चेतन के गुरु भगवान शङ्कर को देखा। उस भगवान शङ्कर की मूर्ति के दाहिनी ओर बैठी हुई ब्रह्मासन लगाए हुए; ममत्वरहित, तृष्णारहित, अहंकार रहित, अट्ठारह वर्ष के लगभग, भगवान शङ्कर के व्रत में लगी हुई तपस्विनी कन्या को देखा। इसके बाद उतरकर पेड़ की शाखा में घोड़े को बाँधकर, पास जाकर भगवान शङ्कर को प्रणाम करके इस दिव्य को बिना पलक झपकी आंखों से फिर देखा। उसके मन में उस कन्या की सुन्दरता तथा कांति से शांति भी

उत्पन्न हो गई। आश्चर्यान्वित हुए उसके मन में आया कि अलौकिक गीत का अनुसरण करते हुए मैंने मनुष्यों के लिए दुर्लभ इस कन्या को देखा है। इसकी अलौकिकता के प्रति मुझे तनिक भी सन्देह नहीं है इसकी दिव्यता का अनुभव कराती है। इस गन्धर्व ध्वनि विशेष का मनुष्य लोक में होना दुर्लभ है। इस लिए जब तक यह मेरी आंखों से ओझल नहीं होती अथवा कैलाश पर्वत की चोटी पर नहीं चढ़ती तब तक तुम कौन हो, तुम्हारा क्या नाम है, इस किशोर अवस्था में तुमने इस व्रत को किसलिए धारण किया है? यह सब उसके पास जाकर पूछता हूं। आश्चर्य का यह स्थान है, इस प्रकार विचार करके वहीं पर बैठे हुए गीत की समाप्ति के अवसर की प्रतीक्षा करता हुआ बैठ गया।

समास प्रयत्नव्यापुतवोचनः प्रयत्नेन व्यापुते लोचने येनासौ प्रयत्नव्यापृतलोचनः (बहुव्रीहि)। प्रतिपन्नशाशुपतव्रताम् प्रतिपन्नम् पाशुपतव्रत यया सा तां प्रतिपन्नपाशुपत व्रताम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४४–४५ (५१) अथ..............सर्वभाचचक्षे।

शब्दार्थ मूकीभूत वीणा – वीणा बजानी बन्द कर दी जिसने। अनुप्राप्तः —आया। दर्शितविनयः—विनय दिखाते हुए। अनुवव्रज — पीछे चल दिए। तिरीभूता छिप जाता। एकान्तवलेम्वितयोगपट्टिकाम्—एकान्त में साधना की हुई। सप्रश्रयम्—विनयपूर्वक। आचचक्षे—कह दिया।

संदर्भ जब चन्द्रापीड गीत ध्वनि सुनता हुआ वहीं बैठ गया तब कुछ क्षण बाद उस कन्या ने वीणा बन्द करके भगवान शङ्कर की परिक्रमा की तथा फि चन्द्रापीड से वार्तालाप करने लगी।

भावार्थ गीत समाप्त होने पर वीणा का बजाना बन्द कर दिया है जिस ने ऐसी उसे कन्या ने उठकर परिक्रमा करके शङ्कर को प्रणाम करने के लिए कहा कि अतिथि का स्वागत हो हे महाभाग इस भूमि में आप कैसे आए हो? बाद में लौटकर स्वभाव से श्वेत दृष्टि से पवित्र करती हुई ने चन्द्रापीड को उठिए आइए! अतिथि सत्कार का अनुभव कीजिए। इस प्रकार कहे जाने पर उसके सम्भाषण मात्र से अपने को अनुगृहीत मानता हुआ, उठकर भक्ति

पूर्वक प्रणाम करके हे भगवती ! ... दिखाते हुए उसने समर्थन किया कि मुझे देखकर जब तक छिपती नहीं तब तक मेरी प्रार्थना से अपना सब वृत्तान्त कह देगी ऐसी मेरी सम्भावना है इस तरह अपने मन में सोचकर सौ कदम चलकर ही तमाल के वृक्षों के अन्धकार वाली भीतर से मणियों के कमण्डल के वलय को धारण करने वाली एकान्त में योग साधन करने वाली शङ्ख के समान भिक्षापात्र से युक्त गुफा को देखा। उसके द्वार पर शिला पर बैठे हुए तथा कन्या से अनुरोध करते हुए चन्द्रापीड ने दूर से ही सिर झुकाकर विनय पूर्वक उसकी उस अतिथि सेवा को स्वीकार किया। अतिथि सत्कार करने पर दूसरी शिला पर बैठी हुई उस कन्या के एक क्षण चुप होने पर क्रमशः पूछने पर चन्द्रापीड ने दिग्विजय से लेकर युगल का अनुसरण करने के कारण यहां आने का अपना सारा वृत्तान्त कह दिया।

समास—मूकीभूतवीणा मूकीभूतवीणा यस्या सा मूकीभूतवीणा (बहुब्रीहि) कृतहरप्रणामा—कृतो हराय प्रणामो यया सा कृतहरप्रणामा (बहुब्रीहि)। अन्धकारितपुरोभागाम् अन्धकारितः पुरोभागो यस्या सा ताम्। एकान्तवलम्बिता योगपट्टिका यस्यां सा ताम् एकान्तवलम्बितयोगपट्टिकाम्।

पृष्ठ ४४—४५ (५२) विदित······ ·······प्रणयः।

शब्दार्थ—अपूपंत भर लिया। उपभुज्य—खाकर। उपस्पृश्य आचमन करके। अवतस्थे—बैठ गया। प्रणयः स्नेह, प्रेम।

संदर्भ—चन्द्रापीड के वृत्तांत को सुनकर उस कन्या ने भिक्षा पात्र लेकर वृक्षों के नीचे से फल इकट्ठे किए तथा चन्द्रापीड को भोजन कराया।

भावार्थ—चन्द्रापीड के वृत्तान्त को जानने वाली उस कन्या ने उठकर तथा भिक्षापात्र लेकर गुफा के समीपवर्ती के नीचे भ्रमण किया। थोड़ी देर में ही उसने स्वयं गिरे हुए फलों से भिक्षा पात्र को भर लिया। इसके बाद आकर उसने उन फलों के उपभोग के लिए चन्द्रापीड को नियुक्त किया। चन्द्रापीड के मन में आया कि तपस्वियों के लिए कोई वस्तु असाध्य (दुर्लभ) नहीं है। इससे बढ़कर आश्चर्य क्या हो सकता है कि चेतनारहित वृक्ष भी सचेतना की भांति इस भगवती के लिए अत्यधिक फल देकर अपनी सफलता उत्पन्न करते हैं। मैंने

यह अपूर्व आश्चर्य देखा है। इस प्रकार अत्यधिक आश्चर्यान्वित हुए उसने घोड़े इन्द्रायुद्ध को लाकर थकावट दूर किए हुए निकट ही बांधकर झरने के जल से स्नान विधि समाप्त करके अमृत के समान स्वादिष्ट फलों को खाकर बर्फ की ठण्डी ठण्डी बून्दों के पड़ते हुए झरने के जल को पीकर तथा आचमन करके तब एकान्त में बैठ गया जब तक उस कन्या ने जल फल मूल के आहार में स्नेह किया अर्थात् जब तक उस कन्या ने प्रेमपूर्वक जल-फल-मूल का आहार किया तब तक चन्द्रापीड़ एकान्त में बैठा रहा।

समास—विदितसकलवृत्तान्ता -विदितः सकलः वृत्तान्तो यया सा विदितसकलवृत्तान्ता (बहुव्रीहि)। व्यपगतचेतना व्यपगता चेतना येषां ते व्यपगतचेतना (बहुव्रीहि)। निर्झरजलनिर्वर्तितस्नानविधि—निर्झर जलेन निर्वर्तित स्नान विधिः येनासौ। निर्झरजलनिर्वर्तित—स्नान विधिः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४६–४७ (५३) इति पङ्क्तिसमापिताहाराम्······· अप्यावादीत।

शब्दार्थ—विश्रब्धम्—विश्वास के साथ। मानुष सुलभाः मनुष्य स्वभाव से मनुष्य में होने वाला। अनिच्छन्तमपि इच्छा के न होते हुए भी। उपचार परिग्रहः—पूजा करना। मरुताम् देवताओं का। कुसुमसुकुमाल पुष्प के ही समान कोमल। लावण्य तिशय—अधिक सौन्दर्य। नः मेरा, हमारा। अतिशयिन्ती—मन में विचार करती हुई। अमीलित लोचना नेत्र बन्द किए हुए। दुर्निवारिता —कठिनता से दूर करने योग्य। व्यसनोपनिपातानाम् —आए हुए दुष्टो। अनभिभवनीयानाम् —दूसरों द्वारा तिरस्कार न करने योग्य। शरीरधर्माणम्—मनुष्यों को। द्वन्दानाम् —सुख दुख को। अवगच्छन्—समझते हुए। वल्कलोपान्तेन—वल्कल वस्त्र के एक भाग से। अपमृज्य—पोंछकर।

संदर्भ—आहार करने के पश्चात् चन्द्रापीड़ ने उस कन्या के निवास स्थान आदि के विषय में पूछा।

भावार्थ—भोजन समाप्त कर लेने वाली तथा संध्या आदि कार्य से निवृत्त होकर शिला पर बैठी हुई उस कन्या (महाश्वेता) के निकट जाकर तथा निकट ही बैठकर क्षण के लिए रुककर चन्द्रापीड़ ने विनयपूर्वक उससे कहा कि हे भगवती मनुष्य स्वभाव से होने वाला ······ पूर्वक ······ होते हुए भी

मुझको प्रश्न करने के लिए प्रेरित करता है। एक स्थान में रहने पर थोड़ा सा परिचय प्राप्त करा देता है। थोड़ी सी पूजा को स्वीकार करना भी स्नेह पैदा कर देता है। इसलिए यदि कष्ट न हो तो आपके कथन से अपने आपको अनुगृहीत करना चाहता हूं। आपके विषय में मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा है आपके जन्म से देवताओं, ऋषियों अथवा गन्धर्वों का कुल अनुगृहीत हुआ है। पुष्प के समान इस नूतनावस्था में यह व्रत किसलिए स्वीकार किया है। कहां ये उम्र, कहाँ ये आकृति, कहाँ यह सौन्दर्य तथा कहां यह इन्द्रियों को वश में करना क्योंकि ऐसी आकृति वाले व्यक्ति के लिए इन्द्रियों को वश में करना कठिन है। यह सब मुझे अद्भुत ही लगता है। देवलोक में प्राप्त दि:1 आश्रमों को छोड़ कर अकेली इस निर्जन वन में क्यों रहती हैं? यह विशेषता न मैंने कभी देखी है न सुनी है। मेरे आश्चर्य को दूर करो। अत: आ1 यह सब मुझे बताने की कृपा करो इस प्रकार से पूछे जाने पर उस कन्या ने हृदय में कुछ विचार करते हुए एक क्षण के लिए चुप रहकर आंसुओं से आँखों को बन्द किये हुए ही रोना प्रारम्भ कर दिया। उसको रोती हुई देखकर चन्द्रापीड़ ने उसी क्षण विचार किया कि भाग्य से आए हुए दुखों को कोई दूर नहीं कर सकता क्योंकि वे दूसरे से तिरस्कार न करने योग्य इस प्रकृति को भी अपने वश में कर लेते हैं। काम की अभिलाषायें मनुष्य को स्पर्श नहीं कर सकती ऐसी बात नहीं अर्थात काम वासनायें मनुष्य शरीर वाले को अवश्य पीड़ित करती हैं सुख दुख की प्रवृत्ति बलवान होती हैं इसके अश्रुपात ने मेरे मन में और भी अधिक आश्चर्य उत्पन्न कर दिया है इसके बाद अपराधी के समान अपने को जानता हुआ चन्द्रापीड़ उठ कर झरने से अञ्जलि में मुंह धोने के लिए जल लाया उस कन्या ने चन्द्रापीड़ के अनुरोध करने पर जल से आखों को धोकर वल्कल वस्त्र से मुंह पोंछकर दीर्घ तथा गर्म श्वांस लेकर धीरे धीरे कहना प्रारम्भ कर दिया।

समास : परिसमापिताहाराम् परिसमापित: आहारो यया सा तां परिसमापिताहारम् (बहुव्रीहि)। निर्वर्तितसंध्योचिताचाराम् — निर्वर्तित: संध्योचिताचारो यया सा ताम् निर्वर्तितसंध्योचिताचाराम् (बहुव्रीहि)। सुरलोकसुलभानि सुरलोकानाम् सुलभानि सुरलोकसुलभानि (षष्ठी तत्पुरुष)। व्यसनोपनिपातानां व्यसन उपनिपातानाम् व्यसनोपनिपातानाम् (सप्तमी तत्पुरुष)।

(ग) महाश्वेता का वृत्तांत

पृष्ठ ४७ (५४) शब्दार्थ – अश्रवणीयेन—न सुनने योग्य। कुतुहलम् – उत्कन्ठा। श्रुतिविषयम् कान। बभूवतु—हुई थी। रजनिकरकलापलावण्येन चन्द्रमा की कलाओं के सौन्दर्य से। हिमकरकिरणावदाकवर्णा—चन्द्रमा की किरणों के समान उज्जवल रङ्ग वाली। मन्दाकिनीम् गङ्गा को। प्रणयिनीम् —प्रिया पत्नी। विगत लक्षणा शुभ लक्षणों से हीन। अनपत्यात्या सन्तान हीन होने के कारण। सुतजन्मातिरिकेन पुत्र जन्म से अविशेष। कृतयथोचितापचार: यथार्थ पूजनादि उपचार किया हुआ।

संदर्भ महाश्वेता के आश्रम में जब चन्द्रापीड ने महाश्वेता से वैराग्य का कारण पूछा तब उस। धीरे धीरे कहना आरम्भ किया।

भावार्थ हे राजकुमार! मुझ मन्दभागिनी तथा पापिनी के जन्म से लेकर न सुनने योग्य वैराग्य का कारण पूछने का क्या लाभ है? तो भी यदि अधिक उत्कण्ठा है तो कहती हूं सुनिए यह तो प्राय: आपने सुना ही होगा कि दक्ष प्रजापति की बहुत सी कन्याओं में से मुनि तथा अरिष्टा नाम की दो पुत्रियाँ थी इनमें से अरिष्टा का पुत्र हँस नामक गन्धर्वों का राजा हुआ। उधर चन्द्रमा की किरणों से उत्पन्न हुई अप्सराओं के कुल से तीन लोकों के नेत्रों को सुन्दर लगने वाली चन्द्रमा की कलाओं के समुह के सौन्दर्य से निर्मित गौरी नाम की चन्द्रमा की किरणों के समान उज्जवल वर्ण वाली कन्या उत्पन्न हुई। उसको दूसरे गन्धर्व कुल के स्वामी हँस ने इस प्रकार अपनी प्राण प्रिया बना लिया कि जैसे क्षीर सागर ने गङ्गा को। इस प्रकार के उन दोनों महात्माओं के यह इस प्रकार की शुभ लक्षणों से रहित केवल उनके शोक के लिए ही इकलौती पुत्री पैदा हुई। मेरे पिताजी ने अपने (निसन्तान) होने के कारण पुत्र जन्म के समान ही मेरे जन्म दिवस से दसवां दिन पूजन हवन आदि उचित कृत्य करके महाश्वेता यह यथार्थ नाम रखा।

पृष्ठ ४८ (५५) शब्दार्थ – [illegible] – अति सुन्दर और मधुर

बोलने वाली। अङ्कादङ्कम् —एक गोद से दूसरे की गोद में। अतिनीवयती — बिता दिया। वपुषि शरीर में। मधुमासदिवेषु—बसन्त के दिनों में। मधुमास विस्तारित शोभ बसन्त के द्वारा बढ़ाई हुई सुन्दरता से युक्त। अभ्यागतम्— आई। सहकारतरू—आम के पेड़। रम्योद्देश—-दर्शन। लोभाक्षिप्तहृदया— सुन्दर स्थान को देखने के लोभ में पड़े हुए हृदय वाली। व्यचरम् ——घूमने लगी।

भावार्थ—यह महाश्वेता नाम वाली मैं अपने पिता के घर में बचपन के कारण अति सुन्दर तथा मधुर बोलने वाली वीणा के समान गन्धर्वों की एक की गोद से दूसरे की, दूसरे की गोद से तीसरे की गोद में घूमती हुई शोक तथा थकान से अज्ञात इस प्रकार मनोहर बचपन को बिताने लगी। धीरे धीरे मेरे शरीर में चैत्र के महीने से बसन्त की तरह नवीन नवीन पत्तों से चैत्र की तरह फलों से नवीन पत्तों की तरह, भौंरों से फूलों की तरह, मद से भौंरों की तरह, नवयौवन इसके पश्चात् सम्पूर्ण संसार के दिल को आनन्द देने वाले बसन्त के दिनों में एक दिन मैं अपनी माता के साथ बसन्त के द्वारा बढ़ाई हुई शोभा से युक्त अच्छोद नाम के तालाब पर स्नान करने आई और यहां आकर फूलों की शोभा से यह लता मण्डप बहुत मनोहारी हैं, यह मधु की धार टपकाता हुआ सुन्दर मञ्जरी (बौर) युक्त आम का वृक्ष है, यह कदम के वृक्षों की वीथि बड़ी ठण्डी है, यह तट पर पड़े हुए वृक्षों की छाया बहुत सुन्दर है इस प्रकार अनेक सुन्दर स्थानों को देखने के लोभ में पड़े हुए हृदय वाली मैं अपनी सखियों के साथ घूमने लगी।

समास—सकलश्च यः जीवलोक इति सकल जीवलोकः (कर्मधारय) तस्य हृदयमिति सकलजीवलोकहृदयम् (षष्ठी तत्पुरुष)। तस्मै आनन्ददायका इति सकलजीवलोहृदयानन्ददायकाः (चतुर्थी तत्पुरुष) तेषु।

पृष्ठ ४८ (५६) शब्दार्थ—वनानिलेन जङ्गली हवा में। उपनीत—उड़ा कर पास में लाया हुआ। अनाघ्रात पूर्वम्—जो पहले कभी नहीं सूंघा था। अभ्यजिघ्राम् —सूंघा। उपारूढकुतूहल——बढ़ी हुई उत्कण्ठा वाली। मुकुलित

लोचना—स्मित नेत्रों वाली। सवयसा—समान उम्र वाले। कर्णावतंसीकृताम्—कर्णालङ्कार बनाए हुए। अमृतबिन्दुनिस्यन्दितीम्—अमृत की बूंदें चबाती हुई।

भावार्थ—एक स्थान में झट से जङ्गली हवा के द्वारा उड़ाकर पास में लाई हुई मनुष्य लोक में न होने योग्य फूल की सुगन्धी को मैंने सूंघा। "यह सुगन्ध कहां से आ रही है" यह जानने के लिए अति उत्कण्ठित हुई स्मित नेत्रों वाली मैंने उस पुष्प की गन्ध से भ्रमरी की तरह आकृष्ट होते हुए कुछ कदम ही आगे चलकर यज्ञोपवीत से सुसज्जित अपने समान ही उम्र वाले एक दूसरे तापस कुमार ने अनुसरण किए जाते हुए तपस्या करते हुए साक्षात वसन्त के समान स्नान करने के लिए आये हुए एक अत्यन्त मनोहारी मुनि कुमार को देखा और उसके द्वारा कान का आभूषण बनाई हुई अमृत की बूंदें चबाती हुई अदृष्ट कुसुम मञ्जरी को देखा।

समास—उपारूढं कुतूहलं यस्य सा: उपारूढकुतूहला (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ४८ (५७) शब्दार्थ—परिमल:—पराग। ईक्षमाणा—देखती हुई। मायामय:—मायावी। मकरकेतु—कामदेव। अलीकम्—झूठ। कलागत—चन्द्रमा की। बहुलपक्षे—कृष्ण पक्ष से। क्षीयमाणस्य—घटते। रश्मिमया—किरण से। क्लेशबहुले—बहुत कष्टों से युक्त। रूपैकपक्षपाती—केवल रूप तथा सौन्दर्य का ही चाहने वाला। विस्मृत निमेषेण—बिना पलक झपके। व्यलोकयं—देखा।

संदर्भ—महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को अपने जन्म तथा बचपन की कहानी सुनाई और फिर जवानी की घटना सुनाने लगी जो इस प्रकार से बताया है कि एक दिन जब वह—

भावार्थ—"इस कुसुम मञ्जरी का ही यह असर है" ऐसा अपने मन में निश्चय करके उस तपस्वी नौजवान को देखती हुई मैं सोचने लगी ओह! रूप का ढेर! यह मायावी मुनि दूसरा कामदेव उत्पन्न कर दिया गया है यह सब बिल्कुल झूठ है कि कृष्ण पक्ष के घटते हुए चन्द्रमा की सम्पूर्ण कलायें अपनी किरणों से पी लेता है। क्योंकि चन्द्रमा की समस्त किरणें तो इसके शरीर में

प्रविष्ट हो रही है। अन्यथा कष्टों से पूर्ण तपस्वी के जीवन में वर्तमान इसके शरीर में यह सौन्दर्य कहां से आता है? इस प्रकार सोचती हूं मुझको गुण और दोषों का विशेष विचार न करने वाले, अपितु केवल रूप सौन्दर्य मात्र को ही पसन्द करने वाले, जवानी में सुलभ होने वाले कामदेव ने मुझे परेशान कर दिया। बिना पलक झपके अपनी दाहिनी आंख से मैं न जाने क्यों उसे बहुत देर तक देखती रही।

समास—तपः एव धन यस्यासौ तपोधनः (बहुव्रीहि)। तपोधनश्चासौ युवा इति तपोधन युवा (कर्मधारय) तम्।

पृष्ठ ४६ (५८) शब्दार्थ शांतात्मनि—सांसारिक विषयों से शांत आत्मा वाला। निक्षिपता फेंकते हुए। श्रेयः—कल्याण कारक। शापाभिज्ञाय शाप से परिचित, शाप भोजन। मुनिजनप्रकृतिः—मुनियों का स्वभाव। 'अवधार्य—निश्चय करके। अशेषजनपूजनीय —सब लोगों से पूजने योग्य। अकरवम्——किया।

संदर्भ—महाश्वेता ने बताया कि वह मुनिकुमार को देखकर वह काम से पीड़ित हो गई और मुग्ध होकर उसे बहुत देर तक देखती रही।

भावार्थ—महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ से कहा "मेरे मन में यह विचार हुआ कि सांसारिक विषयों से शांत आत्मा वाले इस तेजस्वी पुरुष में मुझे फेंकते हुए अनार्य कामदेव ने यह क्या अनुचित काम करना आरम्भ कर दिया जब तक मैं होश में हूं तब तक यहां से चले जाने में ही कल्याण है कहीं ऐसा न हो कि कुपित हुआ यह तपस्वी मुझे अपने शाप से परिचित करावे "क्रोध आकर क्रोध शांत न होने वाला मुनियों का स्वभाव होता है" ऐसा निश्चय करके मैं वहां से चलने के लिए इच्छुक हुई। यह तपस्वी जाति सभी लोगों से पूजा कराने योग्य है इसलिए मैंने उ। प्रणाम किया।

समास अपसर्पणे अभिलाषः यस्याः सा अपसर्पणाभिलाषिण (बहुव्रीहि)।

शब्दार्थ—अपहृतधैर्य —धैर्यहीन। तरलताम्—चञ्चलता को। अनयत—प्राप्त कर दिया। अनङ्ग - कामदेव। प्राप्तप्रसर—अवसर पाई हुई। उपसृत्य —पास जाकर। [illegible] —[illegible]। [illegible] —[illegible] करता है।

संदर्भ—जब महाश्वेता उसी मुनिकुमार में कुछ आसक्त सी होने लगी तब उसने शाप भय से वहां से चले जाने में ही कल्याण समझा। परन्तु पूजनीय तपस्वी को प्रणाम किया।

भावार्थ—इसके आगे महाश्वेता ने फिर कहा कि तब मेरे विकारयुक्त दर्शन से धैर्यहीन हुए उसको भी कामदेव ने इस प्रकार चञ्चल कर दिया कि जिस प्रकार वायु दीपक को चञ्चल कर देती है। इसके पश्चात अवसर पाकर उसके दूसरे साथी मुनि कुमार के पास में जाकर मैंने प्रणाम पूर्वक पूछा—श्रीमान ! इनका क्या नाम है ? यह किसके तपस्वी कुमार हैं ? और किसी नाम के वृक्ष की यह कुसुम मञ्जरी इसने कर्णाभूषण बना रखी है ? इसकी विचित्र सुगन्ध मेरे मन में बहुत उत्कण्ठा पैदा कर रही है ऐसी सुगन्ध मैंने कभी नहीं सूंघी थी। उसने थोड़ा सा मुस्कराते हुए मुझसे कहा युवती ! यह पूछने से तुम्हें क्या प्रयोजन है फिर भी यदि उत्कण्ठा है तो सुनो।

समास कृतः प्रणामो यया सा कृत प्रणामी (बहुव्रीहि) तत्सम।

पृष्ठ ४६ (६०) शब्दार्थ—त्रिभुवन ख्यात कीर्ति तीनो लोकों में प्रसिद्ध यश वाला। अतिशयितनल कुवेर—कुवेर के पुत्र से भी अधिक। आम्बिकापति—शङ्कर को। अभिहितः—कहा। आरोप्यताम्—रख लो। अभिदधानाम् कहती हुई। अनादृत्यैव—अनादर करके, बिना ध्यान दिए ही। अनिच्छन्—इच्छा न करते हुए। कर्णपूरीकृता—कर्णाभूषण बना दी।

संदर्भ—महाश्वेता के पूछने पर उस तपस्वी कुमार के साथी ने उस मुनि कुमार के विषय में बताना आरम्भ किया।

भावार्थ—उसने कहा कि तीनों लोकों में प्रसिद्ध यश वाले, दिव्य लोक में रहने वाले श्वेतकेतु नाम के महान हैं। उस श्रीमान का सम्पूर्ण तीनो लोकों में सुन्दर कुवेर के पुत्र नल कुवेर से भी अधिक रूप था। उन्हीं की यह गृह लक्ष्मी के गर्भ से उत्पन्न हुआ पुण्डरीक नाम का पुत्र है। वही यह आज चतुर्दशी है। इसलिए कैलाश स्थित भगवान शङ्कर की पूजा करने के लिए नन्दन वन के समीप से जा रहा था। वहां देवता ने पारिजात (देव वृक्ष) के पुष्प मञ्जरी को लेकर इससे कहा श्रीमान ! इसे अपने कान के ऊपर रख लीजिए जिससे कि

पारिजात का जीवन सफल हो जाए इस तरह कहती हुई उसकी ओर को विना ध्यान दिये ही यह चल दिया। मैंने उसको पीछे पीछे आती हुई देखकर मित्र! क्या दोष है इसके प्रेमोपहार को स्वीकार कर लो ऐसा कहकर जबरदस्ती उस की इच्छा न करते हुए भी इसके कान का आभूषण बना दिया तब इस प्रकार पूर्व रूप से यह जो है, जिसका है तथा यह जिसकी कुसुम मञ्जरी है, और यह जिस प्रकार इसके कान पर रखी गई है। यह सब कुछ बता दिया है।

समास – त्रयाणाम् भुवनानाम् समाहार इति त्रिभुवनम् (द्विगु) त्रिभुवने प्रख्याता कीर्ति यस्य सः इति त्रिभुवनप्रख्यातकीर्ति (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ५० (६१) शब्दार्थ किंचिदुपदर्शितस्मितः –कुछ थोड़ा मुस्कराता हुआ। रुचितसुरभिपरिमला अच्छी लगने वाली सुगन्धों से युक्त पराग वाली। गृह्यताम् ग्रहण कर लो। अपनीय –उतारकर। मत्कपोलस्पर्शसुखेन मेरे गाल के स्पर्श के आनन्द से। तरलीकृताङ्गुली:——चञ्चल अंगुलियों वाला। गलिताम् गिरी हुई।

संदर्भ—तपस्वी कुमार के साथी ने बताया कि यह मुनिकुमार दिव्य लोक-वासी महामुनि श्वेतकेतु का पुत्र था। वह कुसुम मञ्जरी उस वन देवता ने दी थी जो कि पारिजात वृक्ष की थी। इस प्रकार उसने उस मुनिकुमार तथा कुसुम मञ्जरी की सारी कथा सुनाई महाश्वेता ने कहा—

भावार्थ उसके इस प्रकार कहते हुए उस तापस कुमार ने कुछ मुस्कराते हुए मुझसे कहा–आर्य उत्कण्ठित हुई सुन्दरी! इस प्रश्न करने के प्रयास से क्या लाभ? यदि तुम्हारी प्रिय सुगन्ध से युक्त पराग वाली यह कुसुम मञ्जरी तुम्हें पसन्द है तो यह लो ऐसा कहकर मेरे पास आकर इस कुसुम मञ्जरी को अपने कान से उतारकर कुसुम मञ्जरी मेरे कान में लगा दी और उसको तब मेरे ही गाल के स्पर्श के आनन्द से चञ्चल हुई अंगुलियों वाला उसके हाथ से छूटकर गिरी हुई रुद्राक्ष की माला का भी पता न चला तब मैंने माला को जमीन तक पहुंचने से पहले ही ऊपर से पकड़कर बड़े हाव भाव के साथ अपने गले का ही आभूषण बना लिया।

समास– मत्कपोलयोः स्पर्श इति मत्कपोल स्पर्शः (षष्ठी तत्पुरुष)। तस्य

सुखमिति मत्कपोलस्पर्शसुखम् (षष्ठी तत्पुरुष) तेन ।

पृष्ठ ५० (६२) शब्दार्थ व्यतिकरे घटना । छत्रग्राहिणी छाता पकड़ कर चलने वाली दासी । प्रत्यासीदति--निकट आ रही है । मज्जन विधि—स्नान । अतिकृच्छ्रेण—बड़ी कठिनता से । उद्चलम्—चल पड़ी । धैर्यस्खलितम्——धैर्य टूटना । किञ्चित् प्रस्तितप्रणयकोपः —कुछ प्रेमियों जैसा (बनावटी) क्रोध दिखाते हुए । इत्थं—तरह ।

संदर्भ महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को पुण्डरीक के प्रथम दर्शन का वृत्तान्त सुनाया और बताया कि प्रथम दर्शन के समय से ही महाश्वेता और पुण्डरीक दोनों ऐक दूसरे में आकृष्ट हो रहे थे ।

भावार्थ महाश्वेता ने कहा कि इस प्रकार की घटना होने पर छत्रगृहणी ने मुझसे कहा—"राजकुमारी ! महारानी स्नान कर चुकी हैं" घर चलने का समय निकट है । अतः स्नान कर लीजिए । मैं उसके इस कथन से किसी प्रकार अपने को खींचती हुई अति कठिनता से अपनी दृष्टि को हटाकर स्नान करने के लिए चली । मेरे चल देने पर दूसरे मुनि कुमार ने इस प्रकार पुण्डरीक की धैर्य हीनता को देखकर कुछ प्रेम कोप (बनावटी क्रोध) प्रकट करते हुए कहा ।

पृष्ठ ५० (६३) शब्दार्थ—अनुरूपम्—उचित । क्षुद्रजन क्षुण्णः—नीच पुरुषों से कुचला हुआ । वशित्वम् इन्द्रिय । निग्रहता—इन्द्रियों का दमन । निरुत्सुकता रोकने की इच्छा । प्रज्ञा——अच्छे बुरे का विचार करने वाली बुद्धि । रागाभिषङ्ग प्रेम के संसर्ग से । अभिभूयन्ते -पराजित होते हैं । न लक्षयसि - नहीं देखते । अभिधीयमान कहता हुआ । किञ्चि दुपजातलज्ज—कुछ लज्जित हुआ प्रत्यवादीत् उत्तर दिया ।

संदर्भ—जब महाश्वेता से छत्रग्रहणी ने आकर स्नान करने के लिए कहा तो बड़ी कठिनता से वह पुण्डरीक से अलग हो गई । उसके चले जाने पर मुनि पुण्डरीक के साथी दूसरे मुनि कुमार ने पुण्डरीक को प्रेम में फंसता हुआ देखकर पुण्डरीक को बहुत भर्त्सना दी ।

भावार्थ—दूसरे मुनि कुमार ने कहा—"मित्र पुण्डरीक ! यह तुम्हारे लिये ठीक नहीं है । यह मार्ग तो नीच प्रकृति के मनुष्यों द्वारा चलने के योग्य है तुम

साधारण लोगों की तरह व्याकुल होते हुए अपने आपको क्यों नहीं रोकते ? वह तुम्हारा धैर्य कहाँ गया ? इन्द्रियों को रोकना कहां गया ? वह चित्त की शान्ति कहाँ गई ? बल परम्परा से प्राप्त वह ब्रह्मचर्य कहां है ? वह सम्पूर्ण सांसारिक विषयों को रोकने की इच्छा कहां है ? गुरुओं के द्वारा दिये गये उपदेश कहा गये ? वे वेद के पाठ एवं उप श कहां गये ? सभी सुखों से तुम्हारी सदमत का विचार करने वाली बुद्धि निष्फल हो गई, धर्म शास्त्रों का अभ्यास तुम्हारे लिए व्यर्थ रहा, तुम्हारा संस्कार निरर्थक रहा, गुरुओं का उपदेश तुम्हारा कोई लाभ न कर सका, तुम्हारा ज्ञान निष्कारण रहा जबकि आप जैसे तपस्वी भी राग के संसर्ग से कलुषित होते हैं और मिथ्याचारों से पराजित होते हैं। तुप अपने हाथ की गिरती हुई रुद्राक्ष की माला को क्यों नहीं देखते ? ओह ! बिल्कुल बेहोशी, वह अक्षमाला भी अपहरण कर ले गई पर अब उस अनार्या के द्वारा अप रण होते हुए अपने हृदय को तो रोको। इस प्रकार कहते हुए मुनि कुमार को कुछ लज्जित सा होते हुए पुण्डरीक ने उत्तर दिया।

समास - क्षुद्राश्च जनाः इतिक्षुद्रजनाः (कर्मधारय) क्षुद्रजनैः क्षुण्ण इति क्षुद्रजन क्षुण्णः (तृतीया तत्पुरुष)। धैर्यमेव धनम् येषाम् ते धैर्यधनाः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ५१ (६४) शब्दार्थ अन्यथा · दूसरे प्रकार। समावयसि—संभावना करते हो अनुमान करते हो। मर्षयामि क्षमा करता हूं। अक्षमालाग्रहणपराधम् — रुद्राक्ष की माला को ले जाने के अपराध को। अभिधाय कहकर अलोक। कोपकान्तेन झूठे क्रोध से लाल हुए। अदत्वा—बिना दिये। उन्मुच्य उतार एकावलीम्—एक बड़ी हार। सन्मुखासक्त दृष्टे मेरे मुख पर दृष्टि गड़ाये हुए आयासिषम्—पहुंची।

संदर्भ—महाश्वेता के चल देने पर जब कपिंजल ने पुण्डरीक को भर्त्सना दी और कहा कि तुम्हें इस प्रका साधार । लोगों की तरह प्रेम जाल में फंसना ठीक नहीं है। तब लज्जित होकर कपिंजल को जो उत्तर दिया उसी का वर्णन बाणभट्ट इस अनुच्छेद में करते हैं।

भावार्थ पुण्डरीक ने कहा मित्र कपिंजल ! तुम मुझे अन्य प्रकार से क्यों समझाते हो ? मैं इस दुर्विनीत कन्या के इस प्रकार अक्षमाला को अपहरण कर

ने के अपराध को क्षमा करूंगा ऐसा कहकर पुण्डरीक झूठमूठ के क्रोध से लाल हुए मुख से मुझे कहा "चञ्चले ! तुम अक्षमाला को दिये विना इस स्थान से एक कदम भी नहीं जा सकती । यह सुनकर मैंने (महाश्वेता ने) अपने गले से एक लड़ी हार उतार कर श्रीमान ! यह लीजिये कहते हुए अक्षमाला अपने मुख पर दृष्टि गड़ाये हुए शून्य हृदय पुण्डरीक के पसारे हुए हाथ पर रखकर स्नान करने के लिये तालाव में गई और वहां से प्रयत्न करके किसी प्रकार से उठकर ... ों के द्वारा ले जाई गई माला ... साथ पुण्डरीक का चिन्तन करती हुई मैं ... घर पहुंची और वहाँ निश्चेष्ट होकर बैठ गई ।

समास अक्षमालायाः ग्रहणमिति अक्षमाग्रहणम् (षष्ठी तत्पुरुष) तेन अपराव: (तृतीया तत्पुरुष) तम् सन्मुखे आसक्ता दृष्टियस्य स सम्मुखासक्त दृष्टि (वहुव्रीहि) तस्य ।

पृष्ठ ५२ (६५) शब्दार्थ—ताम्बूलकरङ्कवाहिनी —पान लाकर देने वाली दासी । अन्यतर: —दोनों में से एक । भवत्या: ––आपका । दुहिता––पुत्री । अभिप्रस्थिता—गई हैं । पर्यपृच्छम् पूछा । प्राशादे महल में ।

भावार्थ महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ से कहा—मेरे पान के डिव्वे को लेकर चलने वाली दासी तरलिका भी मेरे साथ स्नान करने आई थी तरलिका ही ने पीछे से आपका परिचय पूछा था कि कन्या कौन थी ? किसकी पुत्री है ? मैंने उसे वता दिया है कि यह गन्धर्वराज हंस की पुत्री महाश्वेता गन्धर्वों के निवास स्थान हेमकूट पर्वत को जा रही है । तव मैंने (तरलिका से) वताओ तो वह तूने कैसा देखा यह वार वार पूछा और इसी वातचीत में तरलिका के साथ ही उस महल में वह दिन विता दिया ।

समास गन्र्वाणमधिपतिः इति गन्धर्वाधिपतिः (षष्ठी तत्पुरुष) तस्य । गन्धर्वाणामधिवास इति गन्धर्वानिवासः (षष्ठी तत्पुरुष) तम् ।

पृष्ठ ५२ (६६) शब्दार्थ लोहितायति—लाल हो जाने पर । रविबिम्बे – सूर्यमण्डल के । उपयाचितुम् – मांगने के लिये । समाहुय—बुलाकर । प्रवेश्यतां ––अन्दर ले आओ । आदिश्य–––आदेश देकर । प्राहिणवत् —भेज दिया । उपविष्टस्य बैठे हुए । प्रक्षाल्य धोकर । अव्यव आसन रहित । अतिक—पास में ।

संदर्भ—महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को बताया कि घर आकर वह निश्चेष्टा बैठी थी कि तरलिका ने आकर उसे दूसरे मुनिकुमार के साथ हुई बातचीत को सुनाया। उसी बातचीत में तरलिका ने दिन बिता दिया इससे आगे महाश्वेता के द्वारा बताई कथा का लेखक वर्णन करता है।

भावार्थ—तब महाश्वेता ने बताया—तब सूर्यमण्डल के लाल हो जाने पर (शाम हो जाने पर) छत्रग्रहणी ने आकर मुझसे कहा राजकुमारी उन मुनि कुमारों में से एक दरवाजे पर खड़ा है वह कहता है कि अक्षमाला को माँगने के लिये आया है। तब मैं कञ्चुकी को बुलाकर जाओ मुनि कुमार को अन्दर ले आओ यह आज्ञा देकर भेज दिया। इसके क्षण भर बाद ही पुण्डरीक के समान ही उनके मित्र, मुनि कुमार कपिंजल को आते हुए देखा। मैं स्वयं ही प्रणाम करने के बाद कपिंजल के लिये आसन लाई। बैठे हुए कपिंजल के चरणों को इच्छा न करते हुए भी जबरदस्ती धोकर आसन रहित भूमि पर ही कपिंजल के पास बैठ गई।

पृष्ठ ५२ (६३) शब्दार्थ—त्रपया लज्जा से। दैवेन भाग्य से। सुहृद-सवः - मित्र के प्राण। समक्षमेव —सामने ही। उपदर्शितकोपेन —दिखावटी क्रोध से। उपजातमन्युः—क्रुद्ध हुआ। आचरिन —करती है। सजातवितर्कः तर्क करता हुआ। प्रतिनिवृत्य--लौटकर। विटपान्तरितविग्रह शरीर को पेड़ के पीछे छिपाये हुए। धैर्यस्खलनविलक्षः— —धैर्य हीनता के कारण लज्जित। अवधार्य--निश्चय करके। अन्वेष्टुम् खोजने के लिए। सरःकुलानि—तालाब के किनारों को। करतलनिहि वामकपोलम्—बायें गाल को हथेली पर रखे हुए अब्रवम् कहा। आयास्यते दुःखी हो रहे हो। विषलताम्—जहर की बेल। निर्मस्ताम् वमकाओं। वदतः—कहते हुए। आक्षिप्ये—रोक कर। प्रमृज्य - पोंछ कर।

संदर्भ महाश्वेता ने बताया कि दिन बीतने पर कपिंजल उसके पास आया उचित आतिथ्य सत्कार होने पर कपिंजल एक आसन पर बैठ गया इससे आगे महाश्वेता और कपिंजल की परस्पर बातचीत का लेखक वर्णन करता है।

भावार्थ महाश्वेता ने कहना प्रारम्भ किया कि इसके बाद कपिंजल ने

महाश्वेता से कहा---राजपुत्री ! क्या कहूं ? लज्जा के कारण मेरी वाणी बोलने में समर्थ नहीं हो रही है। न मालूम भाग्य को क्या करना है परन्तु सब प्रकार से मित्र के प्राणों की रक्षा करनी चाहिए इसलिए कहता हूं। यह तो आपके ही सामने की बात है कि मैंने बड़ी निष्ठुरता दिखाकर झूठी क्रोध से उसको जो कुछ मैंने कहा था। ऐसा कहकर वस्तुतः क्रोध हुआ मैं पुण्डरीक को छोड़कर मैं दूसरे स्थान पर चला गया। आपके चले जाने पर क्षण भर वहां बैठकर अपने मन में वह अकेला रह गया है ऐसा तर्क करके मैं वहां से लौटा और अपने आपको एक वृक्ष की आड़ में छिपाकर उस स्थान को देखने लगा, जब मैंने पुण्डरीक को वहां देखा तब मेरे मन में यह विचार हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि धैर्यहीनता से लज्जित हुआ वह कुछ अनिष्ट कर बैठे क्योंकि ऐसा कोई काम नहीं जिसको मनुष्य लज्जा के कारण न कर लें। अतः इसको अकेले छोड़ना उचित नहीं है, ऐसा निश्चय करके मैं पुण्डरीक को खोजने लगा पुण्डरीक को खोजते हुए मैं तालाब के किनारों को ध्यानपूर्वक देखते हुए इधर उधर दृष्टि घुमाते हुए बहुत देर तक घूमता रहा। इसके बाद एक घनी लताओं वाले लता मण्डल में हाथ पर बांया गाल रखकर शिला तट पर बैठे हुए पहले से बिल्कुल भिन्न आकार वाले मैंने पुण्डरीक को देखा। पुण्डरीक को देखकर अपने मन में विचार करके मैंने कहा कि मित्र पुण्डरीक ! यह जो तूने आरम्भ किया है क्या यह गुरुओं ने उपदेश दिया था ? क्या धर्म शास्त्र में पढ़ा था ? क्या यह धर्म प्राप्त करने का उपाय है ? अथवा क्या तपस्या करने का कोई दूसरा प्रकार है ? क्या यह स्वर्ग में जाने का मार्ग है अथवा क्या यही व्रत रहस्य है ? या मोक्ष प्राप्ति की यही युक्ति है ? आपको मन से भी यह सोचना कैसे उपयुक्त हो सकता है ? मूढ़ होकर तुम इस प्रकार दुखित हो रहे हो। आपको साधु जनों से निन्दित इस प्रकार के साधारण लोगो से मान्य विषयों में क्या कोई सुख की आशा है ? यह मूर्ख मनुष्य जो सांसारिक विषयों के भोग में सुख प्राप्ति की वृद्धि करता है वह धर्म बुद्धि से ज़हर की बेल सींचता है। यह कामदेव कौन होता है ? धैर्य धारण करके इस इस दुराचार की उपेक्षा करो। इस प्रकार कहते हुए मेरी बात को बीच में ही काटकर तथा अपनी आंखें पोछकर हथेली के मेरा हाथ पकड़ कर पुण्डरीक ने कहा।

...समास विटपान्तरित: विग्रह: येनासौ विटपान्तरितविग्रह: (वहुव्रीहि) करतले निहितमिति करतलनिहितम् (सप्तमी तत्पुरुष) करतलनिहित वां कपोल यस्य तम् इति करतलनिहितवामकपोलम् (वहुव्रीहि)।

पृष्ठ ५३ (६८) शब्दार्थ - वहुना अधिक। विवेकनुमल विचार करने में समर्थ। अतिदूरापेतम् दूर हो गया। तुष्णीम् चुप। अचिन्तयम् सोचा। अतिभूमिम् –वहुत दूर तक। निवर्तयितुम् लौटने में। अवस्थिते—अवस्था में अकसर प्राप्तम् अवसर के अनुसार उचित। प्रभवति समर्थ हैं।

संदर्भ—कपिंजल ने अपने मित्र की स्थिति का वर्णन किया और पुण्डरीक ने कपिंजल को जो कहा था उसका वर्णन लेखक वाणभट्ट जी इस अनुच्छेद में करते हैं।

भावार्थ. मित्र अधिक कहने से क्या लाभ ? तुम पूर्ण रूप से स्वस्थ हो इस लिये सरलता से दूसरे को उपदेश दे रहे हो। जिसके पास इन्द्रियाँ ही मन हो, जो देखता हो, सुनता हो अथवा सुने हुए का विचार कर सकता हो तथा जो यह शुभ है और यह अशुभ इस प्रकार का विवेक करने में समर्थ हो उसी को उपदेश देना चाहिए। मेरे से तो ये सव कुछ वहुत ही दूर चले गये हैं। अव तो उपदेश का समय वीत चुका है इस समय जो करना ठीक है वही तुम करो। इतना कहकर वह चुप हो गया तव मैंने यह सोचकर वहुत दूर पहुंच गया है। अव इसको लौटाया नहीं जा सकता है उपदेश तो व्यर्थ है। इस लिए इसकी प्राण रक्षा का यत्न करूं। यह सोचता हुआ ही मैं यहां आया हूं। अव इस अवस्था में अवसर के अनुसार जो करना ठीक हो आप कर सकती हैं। यह कह कर कपिंजल चुप हो गया।

पृष्ठ ५४ (६९) शब्दार्थ आकर्ण्य—सुनकर। दिष्टंतया –सौभाग्य से। अनुवध्नाति—वांध रहा है, फंस रहा है। प्रतिपत्तव्यम्—करना चाहिए। अभिधातव्यम्—कहना चाहिये। आसम् थी। उपलभ्य—सुनकर। जनसमर्दभीरु: मनुष्यों की भीड़ से घवराया हुआ। अप्रतीक्ष्य प्रतीक्षा न करके। प्रययौ—चला गया। अम्वायाम्—माता के। अस्तमुपगते - छिप जाने पर। सवितरि—सूर्य के। विहाय —छोड़कर। ... —छोड़कर। जनसम्मर्दम्—मनुष्यों के

द्वारा की गई निन्दा । अङ्गीकृत्य - स्वीकार करके । अननुज्ञाता - पिता के द्वारा आज्ञा न दी हुई । अननुमोदिता - अनुमोद न की हुई । ग्राहयामिपाणिम्—हाथ पकड़वाती हूं, विवाह करती हूं । इतरपक्षावलम्बनद्वारेण—दूसरे पक्ष का अवलम्बन करने के द्वारा । प्रणविपत्ति - मृत्यु । उपजायते—होती है । एनः—आप । शशिना—चन्द्रमा के द्वारा । अनीयत प्राप्त कर दी गई ।

संदर्भ - महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को कपिंजल के साथ हुई बात को सम्पूर्ण सुनाकर कहा कि इतना कहकर कपिंजल चुप हो गया ।

भावार्थ—मैं यह सुनकर यह सोचती हुई कि सौभाग्य से मेरी तरह उसको भी कामदेव पीड़ित कर रहा है । सब आनन्दों में ऊपर के आनन्द में वर्तमान हुई कहने लगी — ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिए ? अथवा कपिंजल को क्या कहना चाहिए ? मै यह सोच विचार कर रही थी कि तब ही महारानी आई हैं । नौकर से यह समाचार सुनकर मनुष्यों की भीड़ से घबराया हुआ वह कपिंजल मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही चला गया । माता जी के चले जाने पर तथा भगवान सूर्य के अस्त हो जाने पर किंकर्त्तव्य मूढ़ मैंने तरलिका से पूछा—तरलिका ! अब जो उचित हो आप ही बताओ यदि दूसरी कन्याओं की तरह लज्जा को छोड़कर, धैर्य का त्याग कर, विनय को दूर करके, लोगों के द्वारा होने वाली निन्दा की चिन्ता न करके, आचार का उल्लन्धन करके; वंश का ध्यान न करके, अपयश को स्वीकार करके, प्रेम से अन्धी हुई मैं पिता द्वारा आज्ञा न दी हुई तथा माता के द्वारा अनुमोदन न की हुई स्वयं ही पुण्डरीक के पास जाकर अपना पाणिग्रहण करा लेती हूँ तो गुरुजनों के अतिक्रमण से महान अधर्म होता है और यदि दूसरे पक्ष का अवलम्बन करके मृत्यु को स्वीकार करती हूं तो इस प्रकार भी पहले एक तो स्वयं आये हुए कपिंजल के स्नेह का भङ्ग होता है । दूसरे यदि जब पुण्डरीक को मेरे द्वारा किये गये आशा भङ्ग से मृत्यु हो जाये तो तब भी मुनि की हत्या का भारी पाप होता है । मेरे इस प्रकार कहते ही कहते सम्पूर्ण जीव लोक को आनन्द देने वाले चन्द्रमा ने रात्रि को रमणीय बना दिया ।

समास—मुनि जनस्य वध इति मुनिजन वध (षष्ठी तत्पुरुष) तेन तमू इति मुनिजनवधजनितम् (तृतीया तत्पुरुष)

पृष्ठ ५५ (७०) शब्दार्थ—प्रेषय—भेजो। हृदयदयितम्—हृदय का प्रिय अवोचन्—कहा। कृतसिरोऽवगुण्ठना सिर पर घूंघट किये हुए। प्रमदवनपक्षद्वारेण प्रमद वन में खुलने वाले बंगले के दरवाजे से। निर्गत्य—निकल कर। आलापैः बातचीत से। उद्देशम् स्थान को। सरसः —तालाब के। रुदितध्वनिम्——रोने की आवाज। सुतराम —अत्यन्त। आदधाना——कहती हुई। अतित्वरितम्—अति शीघ्र।

संदर्भ—कपिंजल के चले जाने पर महाश्वेता ने तरलिका से पूछा कि उसे क्या करना चाहिए? महाश्वेता के ऐसा कहते हुए ही रात में चाँदनी छिटक गई आगे फिर महाश्वेता ने सुनाया।

भावार्थ तब तरलिका ने मुझसे कहा—राजकुमारी लज्जा से क्या लाभ? प्रसन्न हो जाओ और मुझे भेज दो, मैं तुम्हारे हृदय के प्रिय व्यक्ति को ले आती हूँ अथवा उठो और स्वयं ही वहां चलो इस प्रकार कहती हुई तब सिर पर को घूंघट करके प्रमद वन से खुलने वाले बंगले के दरवाजे से निकल कर तरलिका के साथ समयानुकूल बातचीत करती हुई उस स्थान पर पहुंची वहां उसी तालाब के पश्चिम के किनारे पर पुरुष के रोने की आवाज प्रतीत हुई। उससे अत्यन्त दुखी होकर मानो उसका हृदय फट गया हो, भय के साथ तरलिका! यह क्या है? यह कहती हुई तेजी से उसकी ओर चल दी।

समास—कृतः शिरसि अवगुण्ठन यया सा कृतशिरोवगुण्ठाना (बहुव्रीहि)। विदीर्णं हृदयम् अस्याः सा विदीर्णहृदया (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ५५ (७१) शब्दार्थ—निशीथप्रभावात्—रात के प्रभाव से। विभाव्यमानस्वरम्—पहचाने हुए स्वर वाले। उन्मुक्तार्तदानम् जोर जोर के रोने की आवाज। मदनपिशाच—राक्षस कामदेव। अकृत्यम्—दुष्कार्य, पाप। अनुतिष्ठतं—कर दिया। वेत्सि—जानते हो। मुषितम्—ठगे हुए। निष्परिग्रहः—निराश्रय। अश्रौषम् सुना।

संदर्भ—महाश्वेता ने चन्द्रापीड को बताया कि तरलिका ने उसी तालाब के पश्चिम तट से किसी पुरुष के रोने की आवाज सुनी वह बहुत घबराई और तेजी से उसी ओर चल दी।

भावार्थ— इसके बाद रात्रि के प्रभाव से दूर ही से पहचाने जाते हुए स्वर वाले जोर जोर रोते हुए कहा—मैं मारा गया, हां मैं ठगा गया, ओह ! यह क्या हो गया, दुष्ट राक्षस कामदेव, पापी यह तूने क्या कुकर्म किया ? ओह ! पापिनी दुर्विनीत महाश्वेता इसने तेरा क्या अपराध किया था ? हा भगवन ! श्वेतकेतु ! पुत्र स्नेही ! तुम ठगे हुए अपने आपको नहीं जानते । हा धर्म ! तुम निराश्रय हो गये हा तप ! तू निराश्रय हो गया । सरस्वती तू विधवा हो गई । हा सत्य ! तू अनाथ हो गया । हा सुरलोक ! तू आज शून्य हो गया । मित्र ! मेरी प्रतीक्षा करो मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगा मैं तेरे बिना अकेले क्षण भर भी नहीं रह सकता । मेरे लिए आज संसार शून्य हो गया है । अब जीवन निरर्थक है । तप का कोई प्रयोजन नही रहा संसार आज मेरे लिए सुख रहित हैं । इस तरह और भी कुछ कुछ कहते हुए कपिंजल को सुना ।

पृष्ठ ५६ (७२) शब्दार्थ—तत्क्षण विगतजीवितम् उसी समय (तत्काल) मरे हुए । उद्भूतमूर्च्छान्धकारा - उत्पन्न हुई मूर्च्छा से । नाज्ञासिषम् —नही जानती थी । प्रत्यावृत्तचेतना—होश में आई हुई । विरचय——बनाओ । अनुसरामि — अनुसरण करती हूँ ।

संदर्भ—महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को बताया कि पुरुष के रुदन की आवाज को सुनकर जब वह घबराकर उसी की ओर तेजी से चली तो दूर से ही मैंने आवाज को पहचान लिया कि कपिंजल अनेक प्रकार से रोदन कर रहा था ।

भावार्थ—उस रोदन को सुनकर उसी स्थान पर जाकर तत्क्षण ही प्राणहीन हुए उस महाभाग को देखा । जब मूर्च्छा के कारण आंखों में अन्धेरा हो जाने से उस समय मैं कहां गई क्या किया और क्यों रोई ? इन सबका मुझे ज्ञान नहीं हुआ था । इसके पश्चात होश में आ जाने पर एकमात्र मरने का निश्चय करके कुछ कुछ ध्यान करते हुए बहुत रोकर तरलिका से कहा कि सखी उठो लकड़ियां लेकर चिता बना ओ, मैं प्राणनाथ का अनुसरण करूंगी ।

समास—तत्क्षणमेव विगतम् जीवित यस्य तम् तत्क्षण विगतजीवितम् (बहुव्रीहि) प्रत्यावृत्ता चेतना यस्या सा प्रत्यावृत्तचेतना (बहुव्रीहि) ।

पृष्ठ ५५ (७३) शब्दार्थ — अवतीर्य — उतर कर । महाप्रमाण:—बहुत बड़ा महापुरुपलक्षणोपेत:——महान पुरुषों जैसे शुभ लक्षणों से युक्त । उपरतमु—मृत को । उत्क्षिपन्—ऊपर उठाते हुए । उदयात उड़ गया । व्यतिकरेण -- घटना से । उन्मुखी——ऊपर को मुंह की हुई । ससम्भ्रमम्—एकदम । वयस्यम् मित्र को । उत्पत्य—उड़कर । उत्पन्तन्तमु -- उड़ते हुए । उदगात् – उड़ गया । पश्यन्त्या एव - देखते ही देखते ।

संदर्भ महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को बताया कि इस रोदन को सुनकर वह मूर्छित हो गई और फिर होश में आने पर मैंने सती होने का निश्चय करके तरलिका को चिता बनाने का आदेश दिया ।

भावार्थ—इसी बीच में झट से चन्द्रमा के कमण्डल से निकला हुआ आकाश से उतरकर एक बहुत बड़ा (विशालकाय) महापुरुषों जैसे शुभ लक्षणों से युक्त अलौकिक आकृति वाला मनुष्य आया और अपने दोनों हाथों से उस मृतक को ऊपर उठाये हुए गम्भीर स्वर से बोला—पुत्री महाश्वेता ! तुझे प्राण नहीं त्यागने चाहिये फिर भी इस व्यक्ति के साथ तेरा मिलन होगा । यह वाक्य पिता समान कहकर इसके साथ ही आकाश की ओर उड़ गया । इस घटना से भयभीत, चकित तथा उत्कण्ठित हुई मैंने कपिंजल से पूछा कि यह क्या बात थी । परन्तु वह एकदम बिना उत्तर दिये ही उठ खड़ा हुआ और दुष्ट ! मेरे मित्र का तुम अपहरण करके कहां ले जा रहे हो ? इतना कहकर उड़ते हुए उसका अनुसरण करता हुआ उड़कर आकाश में चला गया मेरे देखते ही देखते वे सब तारों के समूह के बीच में घुस गये ।

समास –चन्द्रस्य मण्डलमिति चन्द्रमण्डलम् (षष्ठी तत्पुरुष) तस्मान्निर्गत इति चन्द्रमण्डलनिर्गत: (पञ्चमी तत्पुरुष) ।

पृष्ठ ५६ (७४) शब्दार्थ — विषण्ण हृदया — खिन्न हृदय वाली । पित्रेव— पिता की तरह । अमानुषाकृति: मनुष्यों की आकृति से भिन्न अर्थात देवाकृति अपगतासु -- निष्प्राण, मृतक । उपलभ्य — ज्ञानकर । तत्प्रत्यागमन कालावधिपर्यन्तम् — —उसके लौटने की समय की अवधि तक । ध्रियताम् —धारण करो । अमी—ये । वराकी बेचारी ।

संदर्भ—महाश्वेता ने बताया कि पुण्डरीक के मर जाने पर चन्द्रमण्डल से निकल कर एक विशालकाय व्यक्ति ने मृत शरीर को उठा लिया और मुझको पुनर्मिलन का आश्वासन देते हुए अपने प्राणों की रक्षा करने को कहा कपिंजल भी विशालकाय व्यक्ति के पीछे चल दिया और वे सब के सब आकाश में उड़ कर तारा मण्डल में प्रवेश कर गये।

भावार्थ—कपिंजल के चले जाने से किंकर्त्तव्य विमूढ़ हुई मैंने तरलिका से कहा—हे तरलिका! तुम नहीं जानती बताओ यह सब क्या हो रहा है? दुःखित हृदय वाली तरलिका ने कहा—यह पापकारिणी इस विषय में कुछ नहीं जानती, किन्तु यह बहुत बड़ा आश्चर्य है। यह पुरुष देवताओं जैसी आकृति वाला था। इसने जाते हुए पिता के समान राजकुमारी को आश्वासन दिया है। तब भी उसका अनुसरण करता हुआ कपिंजल गया ही है। वह कौन है? कहां से आया है? क्यों वह इस तक को उठाकर ले गया है और कहां ले गया है? इत्यादि सब कुछ जानकर ही जीवित रहें अथवा मर। कपिंजल यदि जीवित रहा तो राजकुमारी को मिले बिना नहीं रह सकता है। इसलिए कपिंजल के लौटने के समय की अवधि तक इन प्राणों को धारण किये रहो, ऐसा कहती हुई तरलिका बेचारी मेरे चरणों में गिर पड़ी। मैंने भी सोचा आशा से क्या नहीं किया जा सकता, यह विचार करके उस समय वही ठीक समझते हुए मैंने प्राणों का त्याग नहीं किया और उसी तालाब के किनारे पर तरलिका के साथ वहीं पर रात बिता दी।

समास—विषण्णहृदया यस्याः साऽवपण्णहृदया (बहुव्रीहि) अवगतः असवो यस्या सोऽपगतासुः (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ५७ (७५) शब्दार्थ—प्रत्युषसि—प्रातःकाल। भावयित्वा सोच कर। सर्वजानानाम्—सभी सांसारिक पदार्थों की। स्थानुम् शिव को।

संदर्भ—जब तरलिका ने महाश्वेता से कपिंजल के आगमन पर्यन्त जीवित रहने की प्रार्थना की और उसके पैरों में पड़ गई तब महाश्वेता ने भी अच्छा समझा उसने अपने प्राणों का त्याग न करके कपिंजल के आने तक जीवन का त्याग न करने का निश्चय किया और उसी तालाब के तट पर रात बिताई।

भावार्थ—महाश्वेता कहने लगी कि प्रातःकाल उठकर उसी तालाब में स्नान किया और स्नान करके निश्चयपूर्वक पुण्डरीक के प्रेम कमण्डलु को लेकर उन्हीं वल्कल वस्त्रों तथा अक्षमाला को ग्रहण करके संसार की निःसारता को विचार कर अपनी मन्द पुण्यता को जानकर भाग्य की निष्ठुरता को देखकर तथा सांसारिक पदार्थों का अनित्यता को सोचकर अपने पिता और माता का ध्यान न करके सभी विषय वासनाओं के सुख से मन को हटाकर, इन्द्रियों को वश में करके तथा ब्रह्मचर्य व्रत. धारण करके शरणार्थिनी मैं तीनों के स्वामी अनाथों की शरण इन भगवान शङ्कर की शरण में आ गई।

पृष्ठ ५७ (७६) शब्दार्थ—अपरेद्युः——दूसरे दिन। अभ्यर्थनाभिः प्रार्थनाओं से। अयासीत्—चला गया। त्र्यम्बकम्—शङ्कर को। नृशंसा—निर्दया। गर्हणीया—निन्दनीय। निरवलम्बना—असहाय। कृतब्राह्मणवधमहापातकया - ब्राह्मण की हत्या का महापाप कर देने वाली। वल्कलोपान्तेन—वल्कल के छोर से। आच्छाद्य ढक कर। वदनम्—मुख को। अपारयन्ती असमर्थ होती हुई प्रारोदीत्—जोर से रोई।

संदर्भ महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को अपनी कथा सुनाते हुए बताया कि जब तरलिका के कहने से उसने जीवित रहने का निश्चय कर लिया तो सब सांसारिक बन्धनों से मुक्त होकर पुण्डरीक के ही कमण्डलु तथा अक्षमाला लेकर वह भगवान शङ्कर की शरण में आ गई।

भावार्थ दूसरे दिन कहीं से इस समाचार को पाकर माता जी तथा अन्य बन्धु वर्ग के साथ आकर पिताजी ने बहुत देर तक जोर जोर से रोकर भिन्न २ उपायों से, अनेक प्रार्थनाओं से तथा अनेक प्रकार के उपदेशों से मुझे घर ले जाने के लिये भारी यत्न किया पर जब सब निराश हो गये तब घर चले गये। पिताजी के चले जाने पर तभी से लेकर मैं प्रतिदिन भगवान शङ्कर की पूजा करती हुई बहुत समय से तरलिका के साथ इसी गुफा में लम्बे शोक का अनुभव करती हुई रहती हूँ। वह मैं इस प्रकार की पापकारिणी, कुलक्षणी, निर्लज्ज, स्नेह रहित, निर्दयी, निन्दनीय, निष्प्रयोजन, निष्फल जीवन वाली, असहाय

तथा सुखहीन हूँ । हे भगवान ! इस तरह ब्राह्मण को हत्या का महापाप करने वाली मुझको देखने अथवा पूजने से क्या ? ऐसा कहकर वल्कल वस्त्र छोर से मुँह को ढांप कर आंसुओं के वेग को रोकने में असमर्थ होती हुई महाश्वेता बहुत देर तक कण्ठ से जोर से रोई।

समास ब्राह्मणस्य वधः इति ब्राह्मणवधः (षष्ठी तत्पुरुष) महच्चयत्पातकमिति महापातकम् (कर्मधारय, ब्राह्मणवधस्य महापातकमिति ब्राह्मणवध (षष्ठी, तत्पुरुष) ।

पृष्ठ ५८ (७७) शब्दार्थ उपारूढगौरवः—प्रभावित । अरोपितप्रीतिः—स्नेहवान । आर्द्रीकृतहृदयः—हृदय पिघलाया हुआ । एवाम् इसको । अभाषत —कहा । अनुसरणम्—मरने के बाद, मरना । मोहविलासितम्—अज्ञान का विलास । पद्धतिः—मार्ग । रभसा—जल्दबाजी से । जहति—छोड़ते हैं । उपरतस्य मृत व्यक्ति के । आवहति साधता है । प्रत्युज्जीवनोपायः—पुनः जीवित करने का उपाय । धर्मोपचय—धर्म सञ्चय । शुभलोकोपार्जन स्वर्ग आदि शुभ लोकों की प्राप्ति का साधन । निरकपातप्रतीकारः—नरक में पड़ने से बचने का तरीका । स्वकर्मफलपाकोचिताम् अपने कर्मों के फल के परिणाम के अनुरूप । एनसा पाप से । अंजलिपुटोपनीतेन अंजलि पुट में भरकर लाये हुए । वनवासव्यसनमित्रम्—वनवास की आपत्ति में साथ देने वाला मित्र ।

संदर्भ—जब महाश्वेता ने आरम्भ से लेकर अपने वनवास तक की सारी कहानी चन्द्रापीड़ को सुनाई तब वह अपने आंसुओं को रोक न सकी और जोर-जोर से रोई ।

भावार्थ—चन्द्रापीड़ पहले ही उसके रूप, विनय, तपस्विता तथा निरभिमानता से प्रभावित हो चुका था । महाश्वेता के इस वृत्तान्त का वर्णन करने से तथा महाश्वेता की कृतज्ञता से हृदय हरण किया गया वह अत्यन्त स्नेहवान भी हो गया । पिघले हुए हृदय वाले चन्द्रापीड ने धीरे धीरे कहा —कल्याणी ! कष्टों से घबराने वाला अकृतज्ञ तथा सुख प्राप्ति का लोभी संसार प्रेम को प्रदर्शित करता हुआ रोया करता है परन्तु तुमने तो कार्यरूप से (अन्यथा

रोदन से नहीं) ही सब कुछ नष्ट करते हुए कौन सा प्रेमोचित कार्य नहीं जिससे रीती हो (प्रेमोचित सभी कार्य कर लिये हैं) और वह जो प्रेम के मरने के साथ उसके पीछे मरना है। यह तो अत्यन्त निष्फल है, यह मार्ग मूर्ख लोगों के चलने का है यह केवल मोह का विलास है, यह अज्ञान का रास्ता है, यह जल्दबाजी का काम है, बहुत बड़ा प्रमाद है, कि पिता, भाई, मित्र अथवा पति के मर जाने पर अपने भी प्राणो का परित्याग कर दिया जाये यदि प्राण स्वयं नहीं त्यागते तो स्वयं उनका त्याग करना भी न चाहिए। यह अनुसरण मृत व्यक्ति के किसी भी गुण का साधन नहीं करता। न तो उसके पुनः जीवित होने की आशा है, न धर्म संचय का तरीका है, न यह स्वर्ग के शुभ लोकों की प्राप्ति का साधन है और न रंक में गिरने से बचने का तरीका, न यह मरने वाले प्रिय व्यक्ति के दर्शन का तरीका है और न परस्पर मिलने का कारण। यह तो अपने कर्मों के फल के अनुसार ही दूसरी भूमि पर ले जाता हैं। यह आत्महत्या करने वाले को केवल पापयुक्त करता है। जीवित रहता हुआ तिलांजलि (श्रद्धार्पण) आदि के देने से मृत व्यक्ति तथा अपना दोनों का ही बहुत उपकार करता है। परन्तु मरकर दोनों में से किसी का भी नहीं। अतः आनन्दीय अपने आपको तुम्हें निन्दित नहीं करना चाहिए। संसार मार्ग में उत्पन्न हुए लोगों की इस प्रकार की कथायें चली आती हैं। धैर्यवान व्यक्ति ही आपत्ति को तैरा करते हैं इस प्रकार की कथा व अन्य भी कोमल उपसान्त्वनाओ के द्वारा महाश्वेता को सुखी करके फिर झरने के पानी की अंजलि भर लाये हुए जल से इच्छा न होते हुएं भी जबरदस्ती महाश्वेता का मुख धुलवाया कुछ समय के पश्चात चन्द्रापीड़ महाश्वेता से फिर पूछा कि देवी यह वनवास की आपत्ति में भी साथ देने वाली तुम्हारी सखी परिचायिका तरलिका कहाँ गई ?

(घ) कादम्बरी के जन्मादि वर्णन

पृष्ठ ६९ (७८) शब्दार्थ — अमृतसम्भावत देवताओं से उत्पन्न। तनयः — पुत्र। अमुनैव इसी से। हतवृत्तान्तेन—कुःसमाचार से। आकर्णीत किया। अनुनेतुम्—मानने के लिये। संदिश्य—संदेश देकर। अवितथम् — सत्य।

संदर्भ चन्द्रापीड ने कादम्बरी को बहुत आश्वासन दिया और कहा कि अनुसरण बिल्कुल पाप तथा शास्त्र के विरुद्ध है। उसने अनेक प्रकार से उसे सान्त्वना देकर शान्त किया और फिर तरलिका के विषय में पूछा।

भावार्थ इसके पश्चात चन्द्रापीड के पूछने पर महाश्वेता ने कहा कि महाभाग! देवताओं से उत्पन्न अप्सराओं के कुल में मदिरा नाम की कन्या का जन्म हुआ। दक्ष की पुत्री मुनि के पुत्र चित्ररथ नाम के गन्धर्वराज ने उसके साथ पाणिग्रहण कर लिया। परस्पर प्रेमवृद्धि को प्राप्त होते हुए वह दोनों वहां कुछ समय पश्चात आश्चर्य के समान माता पिता दोनों के एक जीवन की तरह कादम्बरी नाम की श्रेष्ठ कन्या पैदा हुई। वह जन्म से लेकर मेरे दूसरे हृदय के समान प्रिय मेरी बालमित्र है। एक ही स्थान पर मैंने और कादम्बरी ने गीत नृत्य आदि कलाओं का ज्ञान प्राप्त किया और बच्चों के अनुरूप खेल कूदों से बचपन बिताया। तब कादम्बरी ने इसी मेरे दुःख समाचार को सुनकर शोक से पीड़ित होकर यह निश्चय कर लिया है—मैं महाश्वेता के शोक से रहते हुए किसी तरह भी अपना विवाह न कराऊंगी अपनी पुत्री का वह सम्पूर्ण निश्चय कर्ण परम्परा से महाराज चित्ररथ ने भी सुना तब चित्ररथ ने महारानी मदिरा के साथ विचार करके क्षीरोद नामक कञ्चुकी की पुत्री महाश्वेता इस समय कादम्बरी को मनाने के लिए तुम ही समर्थ हो यह सन्देशा देकर प्रातःकाल ही मेरे पास भेजा था। तब मैंने गुरु वचन गौरव तथा अपनी सखी के प्रेम के ही कारण क्षीरोद के साथ ही तरलिका को सखी कादम्बरी इस दुःखीजन को और दुःखी क्यों बनाती हो? यदि मुझको जीवित रखना चाहती हो तो गुरुवचन (पिता की आज्ञा) को सत्य करो। यह सन्देश देकर भेज दिया था। तरलिका के जाने के थोड़ी देर बाद आप इस स्थान पर पधारे थे इतना कहकर महाश्वेता चुप हो गई।

पृष्ठ ६० (७९) शब्दार्थ कुमुदबान्धवे——चन्द्रमा के। वेलायाम् समय पर। क्षीणयाम् ---समाप्त होने पर। क्षणदाम्—रात्रि के। षोडषवर्षं वयसा सोलह वर्ष की उम्र वाली। प्रेमविच्छेदाभिलाषः --प्रेम का विच्छेद करने की इच्छा। भर्तृविरहविधुरा पति के विरह से व्यथित। व्रतकर्षितांगी व्रतों के कारण दुर्बल शरीर वाली। उपरचित:—बना थी।

संदर्भ—चन्द्रापीड के पूछने पर महाश्वेता ने तरलिका के विषय में बताया कि वह कादम्बरी के पास मेरा सन्देश लेकर गई है। इसके बाद की घटना का बाणभट्ट इस अनुच्छेद में वर्णन करते हैं।

भावार्थ—इसी तरह चन्द्रमा के उदय हो जाने पर महाश्वेता को सोई हुई देखकर चन्द्रापीड़ धीरे धीरे पत्तों की शैया पर लेट गया और इस समय मेरे बिना वैशम्पायन क्या सोच रहा होगा, पत्रलेखा क्या सोच रही होगी, राजकुमार क्या सोच रहे होंगे यह चिन्ता करते हुए सो गया इसके पश्चात रात्रि के समाप्त होने पर सोलह वर्ष की आयु वाली तरलिका गन्धर्व कुमार राजकुलों के सम्पर्क में चतुर च्यूरक के साथ प्रातःकाल ही प्रकट हुई। जप समाप्त करके महाश्वेता ने तरलिका से पूछा क्या तूने कुशल पूर्वक मेरी प्रिय सखी कादम्बरी को देखा? तब तरलिका ने मधुरवाणी से निवेदन किया—राजकुमारी! मैंने राजकुमारी कादम्बरी को सब प्रकार से सकुशल देखा और आपका सम्पूर्ण सन्देश निवेदन कर दिया। सन्देश को सुनकर कादम्बरी ने जवाव में जो सन्देश दिया है। वह कादम्बरी का भेजा हुआ वीणावादक केयूरक कहेगा यह कहकर तरलिका चुप हो गई। तरलिका के चुप हो जाने पर केयूरक ने कहा राजकुमारी महाश्वेता देखो कादम्बरी तुमसे निवेदन करती है कि इस तरलिका ने आकर मुझे जो भी कहा है क्या आप मेरे चित्त की परीक्षा कर रही हैं अथवा प्रेम विच्छेद करने की इच्छा? अथवा क्या यह अपने भक्त व्यक्तियों को त्यागने का तरीका है या यह आपका क्रोध है? जहां पति विरह से व्यथित व्रतों के द्वारा दुर्बल शरीर वाली मेरी प्यारी सखी महाश्वेता अत्यन्त कष्ट का अनुभव कर रही हो वहां मैं इसका ध्यान न करके अपने सुख की इच्छुक होकर भला कैसे मैं विवाह कराऊंगी? अथवा कैसे मुझे सुख हो सकता है? तेरे प्रेम से मैंने इस वस्तु में विनय को तिरस्कृत किया, गुरु वचन का अतिक्रमण किया, लोकापवाद का भी ध्यान नहीं किया, तुम्हीं बताओ कि ऐसी दशा में मैं किस प्रकार इस विषय में प्रवृत्त हो सकती हूं अतः मैं यह अंजलि बांधती हूं (हाथ जोड़ती हूं) तुम सपने में भी यह विचार अपने मन में न करो। इतना कहकर केयूरक चुप हो गया। महाश्वेता ने उस सन्देश को सुनकर बहुत देर तक विचार करके जाओ मैं स्वयं आकर जो उचित होगा करूंगी ऐसा कहकर केयूरक को भेज दिया।

समास भक्तश्चासौ जनः इति भक्त जनः (कर्मधारय) तस्य परित्याग इति भक्त जन परित्यागः (षष्ठी तत्पुरुष) भर्तुः विरह इति भर्तु विरहः (षष्ठी तत्पुरुष) ।

पृष्ठ ६१ (८०) शब्दार्थ—पेशलः—चिट्टा, सुन्दर । नावसीदति बिगड़ता न हो । मन्निर्विशेषम् मुझसे अभिन्न । अपनीय—दूर करके । एक महः -एक दिन । श्वोभूते—कला को ।

संदर्भ —केयूरक के द्वारा कादम्बरी का सन्देश सुनकर महाश्वेता ने केयूरक को वापिस लौटा दिया और कहा कि वह स्वयं आकर जो उचित होगा करेगी । इससे आगे की कथा का लेखक वर्णन करता है ।

भावार्थ केयूरक के चले जाने पर महाश्वेता ने चन्द्रापीड़ को कहा कि राजकुमार ! हेमकूट पर्वत बड़ा रमणीय है, चित्ररथ की राजधानी विचित्र है, गन्धर्व लोग सुन्दर हैं और महानुभाव कादम्बरी बड़ी सरल हृदय है । अतः यदि चलने में अधिक कष्ट न हो कोई भारीं प्रयोजन बिगड़ता नहीं तो मेरी प्रार्थना निष्फल न कीजिए प्रार्थना यह है कि यहाँ से मेरे साथ ही हेमकूट को चलकर वहाँ, मुझसे अभिन्न कादम्बरी को देखकर (मिलकर) तथा उसके मोह को दूर करके एक दिन वहां विश्राम करके चले जायें । इस तरह कहती है चन्द्रापीड ने उसको कहा —देवी ! जबसे आपके दर्शन किए तभी से यह चन्द्रापीड़ तुम्हारे आधीन हो गया है इसे इच्छानुसार कर्त्तव्यों में नियुक्त करो । यह कहकर वह महाश्वेता के साथ चल दिया ।

पृष्ठ ६१ (८१) शब्दार्थ—समतीत्य—पारकर । सप्तकक्ष्यान्तराणि - सात आंगन अतिरिक्त । परिवृत्ताम्—घिरी हुई । उपभीज्यमानम्—हवा की जाती हुई । जग्राह—लगा लिया । दृढतर दत्त कण्ठ ग्रहा—जोर से गले में बांह डाल कर । निखिल लोकललना ललामभूतां—सम्पूर्ण संसार की स्त्रियों में सर्वसुन्दरी अविज्ञातशीलः—जिसके आचरण के विषय में कुछ ज्ञात न हो ।

संदर्भ वैशम्पायन ने शूद्रक से कहा कि केयूरक को भेजकर महाश्वेता स्वयं कादम्बरी के पास चलने को तैयार हुई । उसने चन्द्रापीड़ से भी अपने साथ चलने की प्रार्थना की तो चन्द्रापीड़ भी महाश्वेता के साथ चल दिया ।

भावार्थ — चलते चलते हेमकूट पर्वत पर पहुंचे और गन्धर्वराज चित्ररथ के दरवाजे पर पहुंचकर सात और आंगनों को पार करके कन्यान्पुर के दरवाजे पर पहुंचे। यहाँ अनेक कन्याओं से घिरी हुई, चमर हिलाने वाली दासियों के द्वारा हवा की जाती हुई, समस्त संसार की स्त्रियों में सर्वश्रेष्ठ कादम्बरी को देखा। कादम्बरी ने महाश्वेता को अत्यन्त स्नेह और उत्कण्ठा के साथ गले लगा लिया महाश्वेता ने भी जोर से गले में बांह डाले हुए कादम्बरी को कहा "सखी भारतवर्ष में तारापीड़ नाम के राजा हैं, तारापीड़ का चन्द्रापीड़ नामक यह पुत्र दिग्विजयी प्रसङ्ग मे इसी स्थान पर आ गया था। यह दर्शन होने के समय से बिना किसी स्वार्थ के ही मित्रता को प्राप्त हो गया है। इसको मैं अनेक बार प्रिय सखी तुम्हारे विषय में बता चुकी हूं। अतः इसके आचरण के विषय में कुछ ज्ञात नहीं है इस प्रकार की शङ्का को छोड़कर मेरे जैसा ही बर्ताव इसके साथ भी करना चाहिए।

समास निखिलश्चासौ लोक इति निखिल लोकः (कर्मधारय) तस्य ललना इति निखिल लोक ललना तासु ललामभूता ताम् (सप्तमी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ६२ (८२) शब्दार्थ—आयुष्मतिः चिरजीवनी। आह्वयतः—बुलाते हैं। आस्ताम्—बैठे। अभिदधासी—कहती हो। उपदिश्यमान मार्गः—रास्ता बताता हुआ।

सदर्भ — शुक ने शूद्रक को बताया कि कादम्बरी के भवन से पहुँचने के बाद महाश्वेता ने कादम्बरी को चन्द्रापीड़ का परिचय कराया और अपने समान ही उसके साथ भी बर्ताव करने की प्रार्थना की।

भावार्थ — इसी बीच में कञ्चुकी ने राजकुमारी महाश्वेता से कहा कि—आयुष्मती! महाराज चित्ररथ तथा महारानी मदिरा आपको दर्शन के लिए बुला रहे हैं। तब महाश्वेता ने, कादम्बरी से पूछा कि सखी! चन्द्रापीड़ कहां बैठे हैं? कादम्बरी ने कहा कि सखी महाश्वेता ऐसी बात क्यों कहती हो, दर्शन समय से ही यह शरीर का भी स्वामी हैं फिर घर, ऐश्वर्य तथा परिजनों का क्या कहना इसकी तथा प्रिय सखी आपके हृदय को जहाँ अच्छा लगे वहीं वह बैठ जावे। इसके बाद चन्द्रापीड़ केयूरक के द्वारा मार्ग दिखाया जाता हुआ वह मणिनिर्मित मन्दिर में चला गया।

पृष्ठ ५२ (८३) शब्दार्थ—विसृज्य—छोड़कर । परिमितपरिचारिकाभिः—कुछ इनी गिनी दासियों में । आरुरोह—चढ़ गई । निपत्य—पड़कर । वक्ष्यती—कहेगी । महाश्वेताव्यतिकरेण—महाश्वेता की घटना से । विप्रलम्भकः—ठग ।

संदर्भ—शुक ने शूद्रक को बताया कि चित्ररथ के बुलाये जाने पर महाश्वेता उनके पास चली गई । चन्द्रापीड़ केयूरक के द्वारा मणिनिर्मित मन्दिर में पहुंचा दिया गया ।

भावार्थ—चन्द्रापीड़ के चले जाने पर गन्धर्वराज चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी सारी सब सखियों तथा परिजनों को छोड़कर कुछ इनी गिनी दासियों से अनुगम्यमान महल में चली गई और वहां शैया पर लेटकर सोचने लगी—ओ; मैं अन्धी हुई मैंने यह क्या कर लिया ? मन्दपुण्या मैं सब तरह से मारी गई । आज मेरे लिए मरना कल्याणकारी है न कि लज्जित जीवन । इस समाचार को सुन कर पिता जी, माता जी तथा अन्य गन्धर्व लोग क्या कहेंगे ? क्या करूं इसका क्या प्रतिकार हो सकता है ? इन दुष्ट इन्द्रियों की चञ्चलता को मैं किससे कहूं ? और भी महाश्वेता की घटना से मैंने प्रतिज्ञा की थी । प्रिय सखियों के सामने मन्त्रणा की थी और केयूरक के हाथ सन्देश भी भेजा था । मुझ मन्द भाग्य को मालूम नहीं कि दुर्भाग्य से पूर्व जन्म के पापों के संचय से अथवा मृत्यु से या किसी अन्य के द्वारा ही यह ठग चन्द्रापीड़ यहां लाया गया है ऐसा विचार करके अपने कुल की स्थिति से वह अत्यन्त लज्जा को प्राप्त हुई ।

पृष्ठ ६२ (८४) शब्दार्थ—दोलायमानेन—झूलते हुए । चेतना—चित्त से । प्रहिताभिः—भेजी हुई । अक्षैः—द्यूत क्रीडा, जुआ खेलना । विपञ्चीवाद्यैः—वीणा बजाने से । आसनन्त्रैः—बैठा रहा । ... अनेक तारों वाला । ... प्रभावर्षिणम्—प्रकाश बर्षाता हुआ । ... पत्रा—समुद्र ने । ... करुणा ने भी । त्वद्वपु—तुम्हारा शरीर । ... प्रणयप्रसारभङ्ग—प्रथम प्रेम के अवसर का भङ्ग । ... भेजा । चामीकराचलस्य—सुमेरु पर्वत के ।

संदर्भ—शुक ने शूद्रक को बताया कि मेरे पूर्व जन्म का वृत्तान्त बताते हुए जाबालि मुनि ने बताया कि चन्द्रापीड़ के चले जाने पर कादम्बरी अपने महल में जाकर बिस्तर पर लेट गई और अपने किये पर पश्चात्ताप करने लगी ।

भावार्थ—उधर चन्द्रापीड़ भी मणिगुहा में प्रविष्ट होकर कादम्बरी के समान ही चञ्चल हुए चित्त से चिन्ता में डूब गया। अन्त में कामदेव ही इस सन्देह को दूर करने वाला होगा। ऐसा निश्चय करके उठा, उसने मनोरञ्जन के लिए भेजी गई कन्याओं के साथ बैठकर जुआ खेल से, गीतों से, वीणा बजाने से, सुभाषित गष्ठियों तथा अन्य अनेक तरह की बातचीत तथा कोमल कला केलियों से खेलते हुए बैठी रही। तभी उसने आती हुई मदलेखा को उसके पास में तरलिका को तथा उसके द्वारा किये गये, प्रकाश की वर्षा करने वाले अत्यन्त कान्तिमान अनेक तारों वाले हार को देखा मदलेखा ने उस हार को लेकर कहा "कुमार! यह शेर नाम का हार समुद्र भगवान ने घर पर आये हुए वरुण को दिया था। वरुण ने भी यह गन्धर्वराज चित्ररथ को और गन्धर्वराज ने यह हार कादम्बरी को दिया था। कादम्बरी ने तुम्हारे शरीर को इसके अनुरूप समझते हुए आपके पास भेजा है। महाश्वेता ने भी चन्द्रापीड़ को सन्देश दिया कि वे महाभारत को मन से इस प्रथम प्रेमावसर का भङ्ग न करे।" ऐसा कहकर, सुमेरु पर्वत तट पर ताराचक्र के समान उस हार को चन्द्रापीड़ के वक्षस्थल पर बांध दिया।

पृष्ठ ६३ (८५) शब्दार्थ विस्मायमान: चकित हुआ। ग्राहयितुम्—ग्रहण करने में। सौजन्यशालिनोभि:—सज्जनता से युक्त। उपक्रणीकृत—उपकृत कर दिया। विनीयुज्यम् नियुक्त करो। अतिदाक्षिणाय:—अति चतुर।

संदर्भ चन्द्रापीड़ मणिमन्दिर में कन्याओं के साथ विनोद करता हुआ बैठा था कि इतने में मदलेखा तरलिका के साथ शेष नाम का बहुमूल्य हार लेकर आई और चन्द्रापीड़ के गले में हार पहना दिया।

भावार्थ—चन्द्रापीड़ ने चकित होते हुए उत्तर दिया मदलेखा क्या कहना तुम्हारा, बड़ी चतुर हो, जानती हो, ग्रहण कराना। उत्तर का अवकाश न देते हुए बातचीत से कुशलता दिखाई। चलो बात समाप्त हुई। सुजनतामती आपने इस जन को उपकृत कर दिया है। अब इच्छानुसार इष्ट अथवा अनिष्ट किसी भी तरह के कार्यों में लगा सकती हो। अति चतुर देवी कादम्बरी के गुण किसी को [illegible] में नहीं कर लेते ऐसा नहीं [illegible] ऐसा

कहकर कादम्बरी से सम्बन्धित बातों में ही बहुत देर तक बैठकर मदलेखा को विदा कर दिया।

पृष्ठ ६३ (८६) शब्दार्थ —कुमुदषण्डेषु—कुमुदों के झुण्ड। प्रक्षालितम् — धोया हुआ। चन्द्राशीलतम् चन्द्रमा के समान शीतल। अधिशिश्ये — सो गया। कृतप्रस्ताव — प्रस्ताव की हुई। अध्वनो रास्ते पर। समीपशयिनम्—पास म सोने वाले को। शयनसौधशिखरम् — शयन ग्रह के शिखर पर। शयनीयम् शय्या को। क्ष दाम् रात्रि को।

संदर्भ जब मदलेखा ने चन्द्रापीड़ को हार पहना दिया तो चन्द्रापीड़ ने मदलेखा की सृजनता तथा कादम्बरी के गुणों की प्रशंसा करते हुए कहा कि वह उसका दास हो गया है कुछ देर कादम्बरी सम्बन्धी बातचीत करके मदलेखा को विदा कर दिया। तोते ने कहा कि जावालि मुनि फिर कहने लगे।

भावार्थ इसके पश्चात भगवान सूर्य के लाल हो जाने पर कमलों के वनों के रक्त वर्ण हो जाने पर, कुमुदों के समूह के सफेद हो जाने पर, दिशाओं के हरित वर्ण हो जाने पर तथा रात के काली हो जाने पर चन्द्रापीड़ ग्रह कुमुदनी के तट पर देव वृक्ष के रस से धोये हुए, कादम्बरी के नौकर के द्वारा बताये गये, चन्द्रमा के समान शीतल शीला तट पर लेट गया तब कादम्बरी चन्द्रापीड़ से मिलने आई कुछ देर बैठकर प्रस्ताव करने पर राजा तारापीड़ कैसे हैं? देवी विलासवती कैसी हैं? आर्य शुकनास कैसे हैं? उज्जयिनी नगरी कैसी है? वह यहाँ से कितनी दूर है? भारत कैसा देश है? क्या मर्त्यलोक भी रमणीय है? यह सम्पूर्ण बातें पूछी। इस प्रकार की बातचीत करते हुए बहुत देर बैठकर कादम्बरी ने उठकर केयूरक को चन्द्रापीड़ के पास में आये हुए नौकर को आदेश देकर शयनागार के शिखर पर चढ़ गई और वहीं शैया को अलंकृत किया। चन्द्रापीड़ ने भी उसी शिला तट पर कादम्बरी की निर्भिमानता, सौन्दर्य तथा अति गम्भीरता को निस्वार्थ प्रेम का, कादम्बरी सखी मदलेखा की सजता को, परिजनों की महानुभावता को तथा गन्धर्वराज के लोक की अत्यन्त समृद्धि को मन में सोचते हुए एक क्षण के समान रात्रि को बिता दिया।

शिखरम् (षष्ठी तत्पुरुष)। कादम्बर्याः परिजन इति कादम्बरीपरिजनः (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ६४ (८७) शब्दार्थ. जिगमिषति —जानना चाहता है। राज चक्रम् — राज्य सम्बन्धित कामकाज। कुमुदिनी कुमुदनाथकयो —कुमुदिनी और चन्द्रमा में। प्रेमस्निग्धे—प्रेम से चिकना। बहु भाषणम्——अधिक बोलने पर। स्मर्तव्यः करने योग्य।

संदर्भ—मदलेखा ने आकर चन्द्रापीड को कादम्बरी का अमूल्य हार को उपहार स्वरूप भेंट किया। सायकाल कादम्बरी आई वह भी कुछ देर बातचीत का आनन्द देकर चली गई।

भावार्थ .भगवान सूर्य के उदय होने पर महाश्वेता ने कादम्बरी से कहा हे सखी! कुमार जाना चाहता है। किन्तु तुम्हारे में चन्द्रमा की किरणों से चन्द्रकान्त मणि के समान पिघला हुआ कहने में असमर्थ है पीछे इनके विषय में कुछ पता न होने के कारण सारा राज्य दुखी है और फिर अब तो दूर दूर रहने वाले भी तुम दोनों में प्रलय पर्यन्त रहने वाली कमलिनी और सूर्य की प्रीति के समान अथवा कुमुदनी और चन्द्रमा की प्रीति के समान स्थाई प्रीति स्थापित हो गई है। अतः अब आप इसे जाने की अनुमति दे। तब कादम्बरी ने सखी महाश्वेता! अपने परिजनों सहित यह जन (मैं) कुमार के आधीन है यहां पर आग्रह कैसा? यह कहकर गन्धर्व कुमारों को बुलाकर कुमार को इनके अपने स्थान पर पहुँचा दो यह आदेश दिया। चन्द्रापीड़ ने उठकर पहले महाश्वेता को फिर कादम्बरी को प्रणाम किया और कादम्बरी के प्रेम चित्रण हुए नेत्र, तथा मन से पकड़ा जाता हुआ देवी! क्या कहूं? अधिक कहने वाले पर लोग श्रद्धा नहीं करते। अपने परिजनों की बातचीत में मुझे भी याद कीजिये, ऐसा कहकर कल्यान्तपुर से निकल गया।

पृष्ठ ६५ (८८) शब्दार्थ --निर्गत्य --निकलकर। सन्निविष्टम् --ठहरे हुए, लगे हुए। स्कन्धवारम्—छावनी फौज का पड़ाव। अनैषीत् पिता दिया।

संदर्भ जब चन्द्रापीड़ कादम्बरी के यहाँ एक दिन ठहर लिया तो अगले दिन महाश्वेता ने उसको जाने देने की प्रार्थना की।

इसके पश्चात चन्द्रापीड़ ने उन गन्धर्व कुमारों के साथ (कुमार के द्वारा अनुगमन किये जाते हुए) हेमकुण्ड से निकलकर महाश्वेता के आगे में पहुंच कर अच्छोद सरोवर के तट पर लगे हुए अपनी सेना के शिवर (कैम्प) को देखा और वह अपने निवास के लिए घर चला गया। वह वैशम्पायन तथा पत्रलेखा के साथ, महाश्वेता ऐसी है, कादम्बरी ऐसी है, मदलेखा ऐसी है तथा केयूरक ऐसा है, इन्हीं कथाओं में दिन बिता दिया। उसी कादम्बरी का चिन्तन करते हुए ही उसकी वह रात बीत गई।

पृष्ठ ६५ (८८) शब्दार्थ – चूड़ामणि चुम्बिना –सिर से लगी हुई मणि का स्पर्श करने वाले। स्पृहयन्ति इच्छा करते हैं। अतीतदिवसाय—बीतें हुए दिनों के लिए। अकारण पक्षपातिनम् – निःस्वार्थ स्नेह करने वाला। बलवदस्वस्थशरीरा—बहुत अधिक बीमार। स्मरकल्पम् . कामदेव के समान सुन्दर। उत्तरीयपटान्तसयतम्—उत्तरीय के छोर में बन्धा हुआ। आचचक्षे कहा। जिगमिषु —जाने को इच्छुक। आरोप्य—बिठाकर। ययौ—गया।

संदर्भ चन्द्रापीड़ अपने स्कन्धावार में चला गया। चन्द्रापीड़ ने दिन भर वैशम्पायन तथा पत्रलेखा से गन्धर्व लोक सम्बन्धी वातचीत की। वह रात्रि तो जगते ही बीती।

भावार्थ—दूसरे दिन प्रातःकाल भगवान भास्कर के उदय होने पर चन्द्रापीड ने अचानक ही द्वारपाल के साथ केयूरक को आते हुए देखा। उसने दूर से ही प्रणाम करके कहा—"सिर से अञ्जलि बांधकर देवी कादम्बरी आपकी अर्चना करती है तथा महाश्वेता कुशल वचन से, मदलेखा नमस्कार से और तरलिका चरण प्रणाम से आपका अभिवादन करती है। महाश्वेता ने आपको संदेश दिया है। धन्य वे लोग जिनके नेत्रों ने तुम्हें देखा है। यहाँ के सब लोग बीते दिनों के लिए स्पृहा करते हैं। तुम्हारे वियोग से गन्धर्वराज का नगर ऐसा हो गया है मानों उसका उत्सव निपट चुका हो। मुझको तो तुम जानते ही हो कि मैं सब कुछ त्याग चुकी हूं तथापि निष्कारण स्नेही आपको देखने की प्रबल इच्छा है। इतना ही नहीं कादम्बरी बहुत बीमार है और वह कामदेव के समान ही

सुन्दर ... से आप इसे मानित करने का कष्ट करें और यह स्वामी का शेष नाम का हार है जो कि शैय्या पर आप भूल आये थे।" ऐसा कहकर चामर ग्रहणी के हाथ में उत्तरीय के पल्ले में बन्धे हुए हार को खोलकर सौंप दिया। तब केयूरक ने कादम्बरी का समाचार सुनाया। उसको सुनकर जाने के लिए इच्छुक चन्द्रापीड़ इन्द्रायुद्ध नाम के घोड़े पर चढ़कर और अपने पीछे चित्रलेखा को बिठाकर वह केयूरक के पीछे से चलते हुए हेमकूट पर्वत पर गया।

समास सकलश्च यः परित्याग - इति सकलपरित्यागः (कर्मधारय) कृतः सकल परित्यागो यया सा कृतसकलपरित्यागा ताम् (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ९९ (८६) शब्दार्थ कुसुम शयनप्रविशयानाम् – फूलों की शैया पर लेटी हुई। व्यग्रयार्थवर्णान् – छिपे हुए अर्थ वाले। शालीनताम् लज्जा को। कुमारभावोपेतयाः कुमार के प्रेम में फंसी हुई। मृणालिन्याः—कमलिनी के। हुताशनायते – आग की तरह जलते हैं। आतपायते—धूप की तरह तपाती है।

संदर्भ—चन्द्रापीड़ के स्कन्धावार में पहुँचने पर अगले ही दिन केयूरक ने आकर उसे महाश्वेता का सन्देश, गन्धर्वराज नगर की दशा और कादम्बरी की स्थिति सुनाई तो वह एकदम पत्रलेखा को घोड़े पर बिठा केयूरक के साथ वह कादम्बरी के महल में पहुंचा।

भावार्थ तब कादम्बरी के भवन दरवाजे को प्राप्त करके हिमगृह (ठण्डा मकान जहां गर्मी का प्रभाव न हो) के बीच में जाकर फूलों की शैय्या पर लेटी हुई कादम्बरी को उसने देखा। चित्ररथ की पुत्री कादम्बरी को उस अवस्था में देखकर चन्द्रापीड़ ने मधुर शब्दों में अनेक छिपे हुए अर्थ वाले प्रश्न उससे पूछे, कादम्बरी तो उनके सम्पूर्ण अर्थ को मन से समझती हुई लज्जा के कारण चुप रही। तब मदलेखा ने उत्तर दिया—"कुमार! क्या बतलाऊं कादम्बरी को तो बड़ा दारुण अथवा अकथनीय संताप है। अधिक क्या, कुमार के लिए वह संतापदायक न हो जैसे कि, कमलिनी के ठण्डे कोमल पत्ते इसे आग की तरह जलाते हैं, चाँदनी इसे धूप की तरह तपाती है। केवल धैर्य ही है कि जो इसके प्राण धारण किये रहने का साधन है चन्द्रापीड़ भी महाश्वेता के साथ परस्पर

प्रेमवर्धक कथाओं से बहुत समय तक अपने आपको छुड़ाकर स्कन्धावार में आने के लिए कादम्बरी के महल से चला।

समास — कुसुमानां शयनमिती कुसुमशयनम् (षष्ठी तत्पुरुष)। तस्मिन् अधिशयाया ताम् (सप्तमी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ९६ (९०) शब्दार्थ — अभिहितवान कहा। निवर्त्यमानाम् — लौटाई हुई। यास्यति जायेगी। प्रवेश्यताम् — अन्दर ले जाओ। लेखहारकम् — पत्र वाहक। कच्चित क्या। उपसृत्य — पास में आकर।

संदर्भ — जब दूसरे ही दिन स्कन्धावार में केयूरक ने आकर चन्द्रापीड को कादम्बरी की स्थिति सुनाई तो वह एकदम कादम्बरी के पास पहुंचा और महाश्वेता के सहित बहुत देर तक मधुर वार्तालाप करता रहा तभी मदलेखा ने चन्द्रापीड को कादम्बरी की स्थिति भी समझाई। बहुत देर के बाद बड़े प्रयत्न से अपने आपको छुड़ाकर कादम्बरी के महल से निकला।

भावार्थ — तब चन्द्रापीड़ के पीछे पीछे ही आकर केयूरक ने कहा कि देवी कादम्बरी पत्रलेखा को लौटाना नहीं चाहती है, वह अब में जायेगी यह सुनकर चन्द्रापीड़ ने कहा कि पत्रलेखा धन्य तथा स्पृहा करने योग्य है, कि जिसको देवी कादम्बरी को दुर्लभ समझना इस प्रकार प्राप्त हो रही है। अच्छा ले आओ यह कहकर वह फिर स्कन्धावार की ओर चल दिया स्कन्धावार में घुसते ही उसने अपने पिता के पास से आये हुए पत्रवाहक को देखा और उससे पूछा — दूत ! कहो पिता के पास से आये हुए पत्रवाहक को देखा तथा अन्तःपुर की अन्य सब नारियों के सहित माता जी भी कुशलपूर्वक हैं न ? तब उसने पास में आकर प्रणाम करने के पश्चात् "जैसी स्वामी की आज्ञा" कहकर दो पत्र उनको अर्पण कर दिए। युवराज ने सिर पर रखकर उन्हें स्वयं खोलकर बारी २ पढ़ा।

पृष्ठ ९७ (९१) शब्दार्थ परममाहेश्वरः — शिव का अनन्य भक्त। आयतनम् आश्रम घर। उत्साङ्गे — सिर पर। नः हमारा। लेखवाचनिवृत्ति पत्र पढ़ने की समाप्ति का समय। प्रयाणकारणतां नतन्य — प्रस्थान की कारणता को प्राप्त कराओ अर्थात चल दो। अभिन्नार्थम् - बिल्कुल इसी अर्थ के। दर्शयत — दिखाये। तुरङ्गाधिरूढ - घोड़े पर सवार होकर। प्रयाण पटह प्रस्थान का नगाड़ा।

सहसा कादम्बरी के भवन से लौटकर जब चन्द्रापीड़ अपने स्कन्धावार में घोड़े से उतरा तो उसने अपने पिता के पास से आये हुए पत्रवाहक को वहाँ देखा। कुशल समाचार पूछने पर पत्रवाहक ने दो पत्र उसे दिये। चन्द्रापीड़ ने खोलकर स्वयं वे पढ़े। उन पत्रों में इस प्रकार लिखा था।

भावार्थ—स्वस्ति ! उज्जयिनी से अनन्य शिव भक्त महाराजधिराज तारापीड़ सम्पूर्ण सम्पत्तियों के आश्रम देवी चन्द्रापीड़ के मस्तक पर चुम्बन करते हुए सुचित करते हैं। सब प्रजा सकुशल है। न मालूम कितना समय तुम्हें देखे हो गया है। हमारा हृदय बहुत उत्कण्ठित है। महारानी भी अन्तःपुर सहित म्लान हो रही है। इसलिए पढ़ते ही चल दो।

शुकनास के भेजे हुए दूसरे पत्र में इसी अर्थ को पढ़ा। इसी अवसर पर पास में आकर वैशम्पायन ने इसी अर्थ के दो पत्र दिखाये। इसी अवसर पर जो जैसे आज्ञा देते हैं यह कहकर चन्द्रापीड़ ने उसी प्रकार घोड़े पर चढ़े हुये प्रस्थान का नगाड़ा बजवा दिया उसने मेघनाद के मान के प्रधान सेनापति को पत्रलेखा के साथ आने का आदेश दिया और वैशम्पायन को भी वहीं स्कन्धावार में ही नियुक्त करके स्वयं उसी प्रकार घोड़े पर सवार हुआ पीछे २ सेना को साथ लेकर उसी पत्रवाहक से उज्जयिनी का मार्ग पूछता हुआ चल दिया।

पृष्ठ ६७ ६२) शब्दार्थ—अति प्रवृद्ध प्रकाण्ड पादकया बहुत पुराने घने वृक्षों वाले। मण्डलित तरुषण्डया - घिरे हुए वृक्षों के समूह वाली। शून्यया - खाली, निर्जन। अटव्या जङ्गल से। परिणित रविबिम्बे - सूर्यमण्डल के ढल जाने पर। वासरे—दिन में। रक्तध्वजम्—लाल रंग के झण्डे को। तदभिमुखश्च — उसकी ओर। अध्यारम् रास्ते को। लोहतरणेन—लोहे के दरवाजे से। संयोजीकृतदेशाम् - लगाये हुए स्थान वाली। लोहमहिषेण—लोहे के भैंस से। आध्यासितशिलावेदिकाम् - स्थापित की हुई पत्थर वेदी (चौंतरा) को। निस्संस्कारतया—संस्कार न होने के कारण। संज्ञाव्यवहारिणा—संकेतों से बात करने वाले। लम्बोदरतया —लम्बे होने के कारण। प्रभूताहारिणा—बहुत ही अधिक खाने वाला। जरद्द्रविड धर्मिकेण बूढ़े द्रविड धार्मिक से। आवासम् — निवास।

संदर्भ—स्कन्धावार में आकर अपने पिता के पत्र को पढ़कर चन्द्रापीड़ एकदम उज्जयिनी को रवाना हो गया। उसने मेघनाथ को पत्रलेखा के साथ आने तथा वैशम्पायन को स्कन्धावार में रहने के लिए नियुक्त कर दिया। इस के बाद की घटना बाणभट्ट इस अनुच्छेद में वर्णन करते हैं।

भावार्थ—क्रम से अति पुराने और विशाल वृक्षों वाले, मालिन की बेल के मण्डों से घिरे हुए, वृक्षों के समूह वाले तथा पत्रों के मिल जाने से गन्धयुक्त जल वाले, निर्जन वन से जाकर सूर्य मण्डल के पूर्व से पश्चिम में परिणत हुए दिन में (सायंकाल) चन्द्रापीड़ ने एक बहुत बड़े लाल रङ्ग के झण्डे को लाल चन्दन के पेड़ के ऊपर बन्धा हुआ देखा। उसी झण्डे की ओर कुछ रास्ता चल कर उसने लोहे के दरवाजे से युक्त स्थान वाली लोहे के बनाये हुए भैंसे से शोभित पत्थर की वेदी (चौंतरे) वाले संस्कार न होने के कारण कुछ २ करते हुए लंगड़ा होने के कारण धीरे २ चलने वाले बहरा होने के कारण इशारों से ही व्यवहार करने वाले; बड़ा लम्बा पेट होने के कारण बहुत अधिक खाने वाले एक बूढ़े द्रविड़ धार्मिक से अधिष्ठित चण्डिका देवी को देखा उसी स्थान पर उसने डेरा डाल दिया।

समास—मालिन्याः लता इति मालिनी लताः (षष्ठी तत्पुरुष)। तासाम् रण्डपा इति मालिनीलता: मण्डपास्तैः (षष्ठी तत्पुरुष)। पत्राणाम् संकरः इति पत्रसंकरा (षष्ठी तत्पुरुष)।

पृष्ठ ९८ (९३) शब्दार्थ उपसि—प्रातःकाल ही। अहोभिः दिनों से। वाजिनः—घोड़े से। चूडामणियरीचि मलिन्‌—मुकुट से लगी हुई मणि की किरणों वाले। मौलिना—सिर से। महीम गच्छत् भूमि पर लेट गया। गाढमुपगुढ जोर से आलिंगन किया गया। रण रणकसिद्यमानसः अतिखिन्न मन वाला।

संदर्भ—चन्द्रापीड़ जब उज्जयिनी लौटा तो रास्ते में भयानक जङ्गल को पार करके वह एक चण्डिका के मन्दिर में पहुंचा और वहीं रात भर ठहरा। अगले दिन की घटना का इस अनुच्छेद में वर्णन किया गया है।

भावार्थ—प्रातःकाल उठकर वह थोड़े ही दिनों में उज्जयिनी आ गया वहां पिता जी को देखकर दूर से ही घोड़े से उतरकर मुकुट की मणियों की

किरणों से युक्त सिर के बल जमीन पर लेट गया। इसके बाद हाथ फैलाकर 'आओ, आओ' कहकर बुलाकर पिता के द्वारा जोर से बहुत देर तक आलिङ्गन किये हुए चन्द्रापीड़ को राजा विलासवती के भवन में उस विलासवती के द्वारा भी उसी प्रकार आगे बढ़कर स्वागत तथा आगमन सम्बन्धी मङ्गलाचरण किया हुआ चन्द्रापीड़ दिग्विजयी सम्बन्धी बातों से कुछ देर बैठकर और फिर शुकनास तथा मनोरमा से मिलकर अपने ही भवन में चला गया। वहाँ कादम्बरी के विना मन में अति खिन्न हुए उसने केवल अपने भवन अथवा अवन्ति नगर को ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भूमण्डल को ही शून्य सा अनुभव किया और पत्रलेखा के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा।

समास—चूड़ामणी चूड़ामनय इति चूड़ामणिमरीचयस्तेषा मालेति चूड़ामणि-मरीचिमाला (षष्ठी तत्पुरुष)। सन्ति अस्याः इति चूड़ामणिमरीचिमाली (तद्धित इति-प्रत्यय) तेन आगमनस्य मङ्गलाचार: इति आगमनमङ्गलाचार: (षष्ठी तत्पुरुष) कृतः आगमनमङ्गलाचारो यस्य सः कृतागमनमङ्गलाचार: (बहुव्रीहि)।

पृष्ठ ९८ (२४) शब्दार्थ कतिपयदिवसापगमे—कुछ दिन बीत जाने पर। उपायनयत्—ले आया। गुर्वी—भारी। गुहणीयता छिपाने योग्यता। नवविष तन्तु सुकुमारम् नवीन विस (बिस) के तन्तु के समान कोमल।

संदर्भ चन्द्रापीड़ जब उज्जयिनी लौट गया परन्तु कादम्बरी की याद उसे सताती ही रही। वह पत्रलेखा की प्रबल प्रतीक्षा करने लगा। इसी के पश्चात् की कथा श्री बाणभट्ट वर्णन करते हैं।

भावार्थ—इसके पश्चात् कुछ दिन बीत जाने पर मेघनाद पत्रलेखा को लेकर आ गया और उसको चन्द्रापीड़ के पास ले गया। नमस्कार करने पर दूर से ही मुस्कान (मुस्कराहट) से प्रेम प्रकट करते हुए चन्द्रापीड़ ने उसको कहा—"पत्रलेखा! कहो श्रीमती महाश्वेता तथा मदलेखा सहित देवी कादम्बरी कुशल हैं न" पत्रलेखा ने उत्तर दिया स्वामी जैसी आज्ञा देते हैं आपका कल्याण हो। अपनी सखियों तथा परिजनों के सहित कादम्बरी देवी सिर पर से अंजलि बांधकर आपको प्रणाम करती है और उसने मुझसे कहा पत्रलेखा! तुम तो दर्शनों से ही मुझे प्रिय हो, न मालूम मेरा हृदय क्यों तुम में विश्वास करता है मेरे पिता ने मुझको (दान) नहीं दिया है, माता ने भी दान नहीं दिया है और